॥ ओ३म् ॥

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

Date of Printing = 05-01-24
प्रकाशन दिनांक = 05-01-24

जनवरी २०२४

वर्ष ५३ : अङ्क ३
दयानन्दाब्द : १९९
विक्रम-संवत् : पौष-माघ २०८०
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,१२४

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
प्रकाशक व सम्पादक : धर्मपाल आर्य
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :
दयानन्दसन्देश (मासिक)
४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

कुल पृष्ठ २८
एक प्रति १५.०० रु०

वार्षिक शुल्क १५०) रुपये
पंचवर्षीय शुल्क ५००) रुपये
आजीवन शुल्क ११००) रुपये
विदेश में ५०००) रुपये

इस अंक में

- वेदोपदेश २
- परिवार छोटे हुए या कार्पोरेट ने लोगों..... ४
- स्वरों पर प्रकाश ७
- कितना खतरनाक है ये १२ सेकंड का जहर ११
- पेरियार– दलितोद्धारक या हिन्दू-द्वेषी ! १३
- हम महर्षि मनु पर अभिमान क्यों न करें ? १५
- मनुस्मृति दहन दिवस बनाने वालों १७
- बड़ों से छोटी भूल २०
- महर्षि की दूरदर्शिता !!! २१
- त्यागी चौ० पीरुसिंह जी २२
- ब्रह्मचर्य २२
- धर्म और अधर्म २३

विशेष : दयानन्द सन्देश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनसे सम्पादक की पूर्णतया सहमति आवश्यक नहीं है। अतः किसी भी चर्चा/परिचर्चा एवं वाद-विवाद के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण – ४००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) – ६००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

॥ ओ३म् ॥

वेद सब सत्यविद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। —महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश—या ते जिह्वा मधुमती सुमेधा अग्ने देवेषूच्यत उरूची ।
तयेह विश्वाँ अवसे यजत्राना सादय पायया चा मधूनि ॥

—ऋ० ३।५७।५

शब्दार्थ—हे **अग्ने**=पुरोहित ! नेतः ! **या**=जो **ते**=तेरी **मधुमती**=मीठी **सुमेधाः**=उत्तम मेधायुक्त अर्थात् सुबुद्धिपूर्वक **उरूची**=विशाल अर्थों का ज्ञान कराने वाली **जिह्वा**=वाणी **देवेषु**= देवों में, विद्वानों में, **उच्यते**=कही जाती है, प्रसिद्ध है **तया**=उसके द्वारा **अवसे**=प्रीति के लिए, प्रयोजन-सिद्धि के लिए **विश्वान्**= सब **यजत्रान्**=याज्ञिकों को **इह**=यहाँ **आ+सादय**=ला बिठा और **मधूनि**=मधुर पदार्थ **पायय**=पिला ।

व्याख्या—बहुत-से लोग एक विशेष समुदाय के साथ मधुरता का व्यवहार करते हैं। वेद संकेत कर रहा है कि भाई! तू सबके साथ मीठी वाणी बोल। ऋषि ने इसी का अनुसरण करते हुए कहा हैं–'सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य व्यवहार करना चाहिए।' वेद में एक स्थान पर कहा है–

मधुमती स्थ मधुमतीं वाचमुदेयम् । —अथर्व० १६।८।८

हे प्रजाओ ! तुम मिठासयुक्त होओ, मैं मिठासयुक्त वाणी बोलूँ। अर्थात् जो चाहता है कि लोग उसके साथ मीठा व्यवहार करें, उसे दूसरों के साथ स्वयं मधुर व्यवहार करना चाहिए। भगवान् ने उपदेश किया है कि सृष्टि के सारे पदार्थ मधुरता का व्यवहार कर रहे हैं, तू भी मधुरता का व्यवहार कर। देखिए, कितने मधुरमान्=मधुर हैं ये मन्त्र–

मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः॥

—ऋ० १।९०।६

सृष्टि-नियम की अनुकूलता से चलनेवाले के लिए वायु मिठास लाती है, नदियाँ मिठास बहाती हैं, ओषधियाँ हमारे लिए मीठी हों।

मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः । मधु द्यौरस्तु नः पिता ॥ —ऋ० १।९०।७

रात मीठी हैं, प्रभात मीठे हैं, पृथिवी की धूलि या पृथिवीलोक भी मीठा है, पिता द्यौ भी हमारे लिए मधुर हो ।

मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥ —ऋ० १।९०।८

वनस्पति हमारे लिए मीठी हो, सूर्य भी हमारे लिए मधुमान् हो । हमारी गौवें माधवी= मिठासवाली होवें ।

यह सब मिठास ऋतानुचारी के लिए है । ऋत कहते हैं सरल-सीधे, सृष्टि-नियमानुकूल व्यवहार को ।

प्रकृत मन्त्र में वाणी को मधुमती के साथ **'सुमेधाः'** भी कहा गया है। मीठा बोलो, किन्तु बुद्धि के साथ बोलो। बुद्धिरहित मीठा भाषण किस काम का ! मीठे वचन को बुद्धियुक्त कहने का प्रयोजन है, यदि वक्ता में बुद्धि हो, तो वह अप्रिय सत्य को भी प्रिय बना लेगा। स्मृतिकार कहते हैं–

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम् ।[१]

सत्य बोले, किन्तु अप्रिय सत्य न बोले ।

बड़ी उलझन है। क्या चुप रहा जाए? नहीं, यही मनु महाराज कहते हैं–

'मौनात्सत्यं विशिष्यते' ।[२]

चुप रहने से सत्य बोलना अच्छा है।

वेद भी यही कहता है–

वदन् ब्रह्माऽवदतो वनीयान् ।[३]

बोलनेवाला ज्ञानी न बोलनेवाले से अधिक पूज्य है, अर्थात् सत्य तो अवश्य बोलना है चुप नहीं रहना । हाँ उसे अप्रिय भी नहीं रहने दे । प्रिय बनाने के लिए बुद्धि चाहिए। इसी कारण वेद ने कहा–**या ते जिह्वा मधुमती सुमेधाः**–जो तेरी मीठी सुबुद्धियुक्त वाणी है, उस सुबुद्धियुक्त वाणी से सब जनों को इकट्ठा कर और मिठास पिला। सबसे मीठा वेद है, उन्हें वह पिला । बता, तू वेद का मधुर पान दूसरों को पिलाता है ? नहीं पिलाता, तो अब पिला । वेद बहुत मीठा है। एक बार स्वयं पी, फिर तू बार-बार पीएगा और विवश होकर दूसरों को भी पिलाएगा ।

---

१. मनु० ४।१३८
२. मनु० २।८३
३. ऋ० १०।११७।७

उत्पन्नपश्चात्तापस्य बुद्धिर्भवति यादृशी ।
तादृशी यदि पूर्वं स्यात् कस्य न स्यान्महोदयः॥ –चाणक्यनीति

अर्थ–गलत काम करने के पीछे पछताने वाले पुरुष की जैसी बुद्धि होती है, वैसी यदि पहले होती तो किसकी बड़ी समृद्धि न होती, अर्थात् अवश्य होती ।

यथा चतुर्भिः कनकं परीक्ष्यते संघर्षणच्छेदनतापताडनैः ।
तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते, त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा ॥ –चाणक्यनीति

अर्थ–जैसे घिसने, काटने, तपाने और पीटने–इन चार प्रकार से सोने की परीक्षा की जाती है, वैसे ही दान, शील, गुण और आचरण इन चारों प्रकार से पुरुष की भी परीक्षा की जाती है।

परिवार छोटे हुए या कारपोरेट ने लोगों को अकेला किया!

–धर्मपाल आर्य

आज २५ से तीस बरस पहले बच्चे क्या, खेलते थे खो-खो गिल्ली-डंडा, और पिट्ठू गरम छुपन छुपाई रस्सा-कस्सी आंख-मिचौली चोर-सिपाही कंचा गोली और आज बच्चे क्या खेलते हैं–वीडियो गेम्स, बेबी डोल्स से लेकर किसी घर में बच्चा खेलता है टेडी बियर से फिर बार्बी डोल्स से–

लेकिन अब एक सिस्टम के जरिये आगे आने वाले बच्चों से उनका फ्यूचर छीना जा रहा है। जिसके तहत सबसे पहले फैमिली खत्म करनी है! इंसान को पूरी तरह इंडिविजुअल में तोड़ना है। अकेला करना फिर उन्हें अपना माल बेचना है। यानि जन्म से लेकर मौत तक उसे अपना ग्राहक बनाना। अब सवाल है कि यह कौन करवा रहा है और क्यों करवा रहा है। सीधा सा नाम जेहन में आएगा कॉरपोरेट।

मुनाफे के बाजार की इस साजिश को अगर आप समझेंगे तो अपना माथा पकड़ लेंगे कि कैसे किस तरीके से पहले भारत के परिवार तोड़े जा रहे हैं, फिर समाज और इसके बाद कैसे देश। कल्पना कीजिये और दो दशक पीछे चले जाइये सोचिये! जब माँ किसी कारण बाहर गयी होती थी तो घर में चाची ताई बुआ भाभी या दादी कोई भी खाना बनाकर खिला देती थी। खेलना हो तो घर परिवार में पांच सात बच्चे मिलकर खेल लेते थे। खुशी का प्रोग्राम हो तो सब परिवार रिश्तेदार मिलकर सारा घर में ही मामला सम्हाल लेते थे। मातम भी हो तो सब मिलकर एक दूसरे को दिलासा दे देते थे। शायद जन्म से लेकर खेल हो या शादी या फिर जीवन का अंत सब कुछ परिवार ही सम्हाल लेता था जिसमें समाज भी शामिल होता था।

लेकिन आज सब कुछ बदल रहा है। बच्चे के खेलने के लिए टेडी बियर वीडियो गेम्स, बेबी डोल्स, बार्बी डोल्स है। मोबाइल गेम्स से विडियो गेम्स है। घर में शादी है तो मेरिज होम है, वहाँ खाने की पर प्लेट के हिसाब से तय कर देते हैं। किसी को किसी की जरूरत नहीं, इसके अलावा माँ घर में नहीं है, तो ताई चाची की जगह फूडपांडा है, जोमाटो स्वेगी है। किसी कारण किसी प्रियजन की मौत हो जाये तो चार लोगों की जरूरत नहीं है मोक्षिल डॉट कॉम जैसी कम्पनियां बाजार में उपलब्ध हैं, क्लिक कीजिये अर्थी से लेकर रोने-धोने वाले सब किराये पर आ जायेंगे।

आखिर यह सब कैसे बदला आप सोच भी नहीं सकते दरअसल कई दशक पहले अमेरिका दुनिया को गेंहू निर्यात करता था। हमारा देश भी लेता था। लेकिन अचानक फिर हरित क्रांति का दौर चला। दुनिया के बहुत देश अन्न पर आत्म-निर्भर हो गये, अमेरिका का गेंहू बेकार होने लगा, तब यू॰ एस॰ ए॰ के कई उद्योगपति एक साथ बैठे उन्होंने यहाँ प्लान तैयार किया। जिसमें पहला यह कि फास्टफूड तैयार किये जायें और दूसरा यह कि आखिर कैसे दुनिया के लोगों को अपने ऊपर डिपेंड किया जाये। फास्टफूड तो तैयार हो गया लोग स्वाद या आलस में खरीदने भी लगे। लेकिन अभी समस्या थी लोग परिवार में रहते थे तो इन चीजों पर बहुत कम डिपेंड थे। सोना चांदी एक बार खरीद लिया, मकान एक बार बनवा लिया, गाड़ी ली तो दस साल की छुट्टी। तो इसके बाद

उनकी जेब से पैसा कैसे निकला जाये प्लान तैयार हुआ। यानि इंडिविजुअल में तोड़कर फैमिली और समाज को खत्म करना है, जिससे जीवन यापन करने के लिए इंडिविजुअल लेवल पर डिमांड बढ़े। हर इंडिविजुअल का अपना घर हो, सारे जीवन यापन करने के टूल्स हर आदमी अपने खरीदे। आदमी जितना अकेला होगा उतनी बोरियत होगी। उतना ही वो मार्केट से मनोरंजन के लिए उत्पाद खरीदेगा! कुल मिला के इससे कारपोरेट फर्म्स के पास बड़ी मात्रा में पैसा आएगा। हर पार्टी को फंड करेंगे और उस पार्टी को कंट्रोल करके उन देशों को कंट्रोल करेंगे। गरीब देशों को इस शर्त पर कर्जा मिलने लगा कि वो अपने यहाँ जॉइंट फेमिली को समाप्त करेंगे।

इसके लिए ७० के दशक में परिवार नियोजन जैसे कई फार्मूले लागू किये छोटा परिवार सुखी परिवार के स्लोगन शुरू हुए। वही परिवार सुखी होंगे जो छोटे होंगे। अब इसके लिए एक और दो कमरों के भवन फ्लैट बनाने शुरू किये। उनमें कोई भी माता-पिता भाई बहन बुआ और बच्चों समेत नहीं रह सकता था तो परिवार टूटने लगे। कामकाजी लोग परिवार से अलग होने लगे। इसी के देखा-देखी ८० में चाइना भी वन चाइल्ड पॉलिसी ले कर आ गया।

जब भारत और चाइना जैसे देशों में परिवार छोटे हो रहे थे सिमट रहे थे। पश्चिमी देशों में लोग छोटे परिवारों में अवसाद की स्थिति का सामना करने लगे थे। उनके बच्चे अकेले होने लगे थे या अकेलापन फील करने लगे थे। अब यहाँ से कई दशक पीछे चलिए दक्षिणी केलोफोर्निया में रुथ हैंड्लर नाम की एक महिला और उनके पति एलियट एक गेराज वर्क शॉप में काम करते थे। उनकी एक बेटी थी बारबरा वो अकेली थी। उसका कोई दूसरा भाई बहन नहीं था तो इस दम्पत्ति ने अपनी बेटी बार्बी को एक कागज की गुड़िया जैसी आकृति से बात करते खेलते देखा। एक मां के रूप में, रूथ हैंड्लर यह देखकर एहसास हुआ कि ये मात्र एक खिलौना अकेले बच्चों पर प्रभाव डाल सकता है। उन्होंने एक गुड़िया बनाई उसका नाम दिया बार्बी डॉल। वो अब उसके साथ अपना अकेलापन बाँटने लगी। जब यह किस्सा कई लोगों तक पहुंचा तो छोटे परिवार के लोग अपने इकलोते बेटे बेटियों के लिए इसकी डिमांड करने लगे। रुथ हैंड्लर और उनके पति एलियट ने १९४५ में एक खिलौना कम्पनी मेटेल की स्थापना की और सिंगल बच्चों को गुड़िया बेचने लगे।

सोचिये अगर उनकी बेटी बार्बी के पास दादा-दादी, नाना-नानी या भाई-बहन होते तो उसे किसी गुड़िया की जरूरत ना होती। लेकिन बाद में यह मजबूरी एक बहुत बड़े बिजनेस में बदल गयी। फिर तो बेबी डॉल्स और भालू जैसा खिलौना जिसे टेडी बियर कहते हैं, उनकी डिमांड बढ़ने लगी। एक ऊँचा तबका जो अच्छे पैसे कमाता था जिनके पास पैसा था जो दो या तीन बच्चों का पोषण कर सकते थे वो भी अपने बच्चों को भाई बहन देने के बजाय टेडी बियर और बार्बी डॉल जैसे खिलौने देने लगे।

धीरे-धीरे जब भारत जैसे देशों में भी परिवार सिकुड़ने लगे तो कामकाजी लोग अपने बच्चों के लिए गुड़िया और टेडी बियर खरीदने लगे। अब दूसरे चरण में बाजार इस एकल व्यवस्था पर हावी होने लग गया था। पहले खिलौने फिर इलेक्ट्रॉनिक गेम्स बाजार में आने लगे। आज ऑनलाइन गेम्स का सालाना बिजनेस सिर्फ इंडिया में ही एक लाख करोड़ का है और गुड्डे गुड़िया, खेल खिलौने का बाजार साल २०२२ में डेढ़ बिलियन डॉलर था।

इसी तरह आज भारत में ऑनलाइन फूड डिलिवरी बाजार ३३ अरब अमेरिकी डॉलर है जो साल २०२७ तक अनुमानित ७३ अरब अमेरिकी

डॉलर हो जाएगी। इसका अनुमान इस चीज से लगा लीजिये कि अगले पांच से दस साल में आधी आबादी घर में खाना बनाना बंद कर देगी और ऑनलाइन भोजन पर निर्भर हो जाएगी।

आज से तीस साल पहले लोग उसी घर में रहते थे जो बाप दादा का बनाया हुआ था। उसमें पूरा परिवार एक साथ रहता था। धीरे-धीरे परिवार पीछे छूटने लगे भूमंडलीकरण की वजह से उन देशों में भी परिवार टूट रहे हैं, जहाँ अकेले रहने की रिवाज नहीं है। भारत की ही बात करें तो बड़ी संख्या में लोग रोजगार की तलाश में गांवों से शहरों में या विदेशों में पलायन कर रहे हैं। बड़ी संख्या में फ्लेट बनने लगे। जो खरीद सकता है खरीद ले जो नहीं खरीद सकता वो बैंक से लोन लेकर किस्तों में भी ले सकता है। आज रियल बिजनेस ४७७ बिलियन डॉलर्स के पास पहुँच चुका है। इसके विपरीत साल २०१५ की दैनिक जागरण की एक रिपोर्ट थी कि उत्तराखंड में बड़ी संख्या में करीब तीन हजार गाँव खाली हो चुके हैं।

अब आगे बढिए बड़े परिवार थे तो मकान भी बड़े थे। इस कारण घरों में हमेशा चहल पहल और रौनक बनी रहती थी। बच्चे छुट्टियों में मामा नाना नानी या बुआ और मौसी के घर जाते थे। रिश्ते भी मजबूत होते थे और बच्चों को बच्चे मिल जाते थे। लेकिन अब ये चीजें बड़ी तेजी से पीछे छूट रही हैं। जिसकी वजह से ना चाहते हुए भी परिवारों में एक दूरी बन रही है। यही हालात अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हैं और आज शोध का विषय बन गए हैं। ब्रिटेन की एक संस्था है-"स्टैंड अलोन" जो परिवार से अलग हो चुके लोगों की मदद करती है। इस संस्था की शोध रिपोर्ट बताती है कि ब्रिटेन में हर पांचवें परिवार में कोई एक सदस्य परिवार से अलग होता है। अमरीका में करीब दो हजार माँओं और उनके बच्चों पर की गई रिसर्च बताती है कि दस फीसद माँएं अपने बच्चों से अलग हो चुकी हैं। अमरीका का ही एक और शोध बताता है कि कुछ समुदायों में मां-बाप का बच्चों से अलग होना इतना ही आम है जितना कि तलाक होना। इसके अलावा कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और सिंगापुर में भी यही हाल है। लगभग सभी देशों में आज बुजुर्गों के लिए ओल्ड एज हाउस बनने लगे हैं। उन्हें वहाँ कीमत देकर हर तरह की सुविधा मिल जाती हैं।

यानि अब ओल्ड एज हाउस एक बड़ा बिजनेस बन चुका है। कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि आने वाले २० साल में स्थिति पूरी तरह बदल जाएगी। तब हर कोई अकेला रह रहा होगा और सिर्फ सेवा प्रदाता कम्पनियों के भरोसे जीवन जी रहा होगा। लेकिन इस अकेलेपन में वो अपनी आयु को भी कम कर रहा होगा। दरअसल इसी साल अगस्त में लाइव टू हंड्रेड सेक्रेट्स ऑफ थी ब्लू जोंस नाम की एक डेकूमेनटरी आई थी जिसमें लम्बा जीवन जीने के रहस्य बताये गये हैं डैन ब्यूटनर ने २० साल तक जो अध्ययन किया उसे इस डेकूमेनटरी के माध्यम से बताया है कि छोटे परिवार या अकेले रहने वाले लोगों की अपेक्षा बड़े और संयुक्त परिवारों में रहने वाले लोग ही लम्बा जीवन जीते हैं।

कारण आज बच्चे छोटे एकल परिवारों में रह रहे हैं, जहाँ पिता के साथ-साथ मां भी दिनभर बाहर काम करती है, खाली घरों में बच्चों की देखभाल आया कर रही है अगर बच्चा अकेला है तो अवसाद में भी चला जाता है। पहले घरों पर बहुत से रिश्तेदारों का आना जाना लगा रहता था। सुख सुविधा के अभाव में लोग अनजाने में ही सही, मेहनती और जिम्मेदार बनते चले जाते थे अब बच्चों को न तो मेहमान दिखते हैं और न ही अभाव उनके लिए हर चीज एक ऑर्डर पर हाजिर होती है तो उनके

(शेष पृष्ठ २७ पर)

स्वरों पर प्रकाश

–उत्तरा नेरूर्कर, बंगलौर (मो०-९८४५०५८३१०)

आजकल वेदमन्त्रों पर लगे स्वरचिह्न बहुत चर्चा में हैं । इन चर्चाओं में मैंने पाया है कि कुछ तथ्य जाने तो जाते हैं, परन्तु उनके पीछे का तर्क स्पष्ट नहीं हो पाता, जिसके कारण हमें तथ्य रट लेने पड़ते हैं । यदि हम नियमों के कारणों को जान लें, तो उन नियमों में हम फिर कभी गलती न करें । कुछ ऐसे कारण और कुछ अन्य संशयात्मक स्थलों का समाधान मैं इस लेख में प्रस्तुत कर रही हूँ ।

पहले तो हमें यह जानना चाहिए कि 'स्वर' शब्द के कई अर्थ होते हैं । इनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

(१) **अच्**–वर्णमाला में जो स्वर (vowels) होते हैं– अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ। इनसे अन्य सभी वर्ण हल् या व्यञ्जन (consonants) कहाते हैं। स्वर ऐसा क्यों कहाते हैं, इसका निर्वचन पतञ्जलि ने महाभाष्य में दिया है – **स्वयं राजन्त इति स्वराः** (महाभाष्य १।२।२९) – अर्थात् "जिनके उच्चारण में दूसरे वर्णों के सहाय की अपेक्षा न हो (स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत वर्णोच्चारण शिक्षा)"। इस वाक्य को पूर्णतया समझने के लिए, स्वरों के विपरीत, व्यञ्जनों की परिभाषा को भी समझना पड़ेगा–**अन्वग्भवति व्यञ्जनमिति** (महाभाष्य १।२।२९) – अर्थात् "जिनका उच्चारण बिना स्वर के नहीं हो सकता, वे व्यञ्जन कहाते हैं (स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत वर्णोच्चारण शिक्षा)"। सो, यदि आप 'क्' बोलना चाहें, तो आप पाएंगे कि उसको बोलना सम्भव नहीं है; परन्तु यदि हम उसके आगे या पीछे या कुछ व्यञ्जनों के व्यवधान से, पूर्व या पश्चात्, एक स्वर लगा दें, तो झट से उनको बोल पाएंगे, जैसे – इक्, कि, क्यों, उदञ्च् । इसके विपरीत स्वरों को आप अकेले ही बोल सकते हैं – आओ ।

यहाँ तक तो सब समझते हैं, अब विशेष बात समझते हैं । स्वरों की इस स्वतन्त्रता का अर्थ यह हुआ कि आप इनको जितना चाहें उतना खींच कर बोल सकते हैं, उनका स्वरूप नहीं बदलेगा, जैसे – आऽऽऽऽऽऽ, इऽऽऽऽऽऽ । व्याकरण की दृष्टि से इस खिचांव को मात्रा कहते हैं, और बोलने जाने वाली भाषा में तीन मात्रएं वेदों से प्राप्त होती हैं – ह्रस्व (एकमात्रिक), दीर्घ (ह्रस्व की दुगुनी, द्विमात्रिक) और प्लुत (त्रिमात्रिक)। गान आदि में तो स्वरों को जितना भी खींच लिया जाए, उस पर कोई बन्धन नहीं है । अब प्रश्न उठ सकता है कि व्यञ्जनों में भी तो यह कर सकते हैं, जैसे – येऽऽऽऽऽ । तो यहाँ जब आप उच्चारण करेंगे तो पाएंगे कि तो आरम्भ में क्षणभर के लिए उच्चरित होकर समाप्त हो जाता है, जो खिंचता है, वह एकार ही है । इस तथ्य के दो अपवाद जैसे प्रतीत होते हैं – एक है मकार, जैसे कि ओम्ऽऽऽऽऽ में हम 'म्' को लम्बा खींच सकते हैं, और वह 'म्' ही रहता है । यहाँ यह जानना चाहिए कि खिंचने वाला 'म्' वर्ण नहीं है, परन्तु अस्पष्ट ध्वनि है, जिसे अंग्रेजी में 'hum' कहते हैं । दूसरी प्रतीति होती है स् में जहाँ हम हंस्ऽऽऽऽऽ जैसे बोल सकते है । यहाँ भी सकार अस्पष्ट ध्वनि संज्ञक है, जिसे अंग्रेजी में 'hiss' कहते हैं । इस प्रकार, पतञ्जलि

की उपर्युक्त परिभाषाएं पूर्णतया सम्यक् हैं ।

इस चर्चा का एक और तथ्य ध्यान में रखने योग्य है – व्यञ्जन केवल क्षणभर के लिए उच्चरित होता है। इस तथ्य का प्रभाव हम आगे दिखाएंगे ।

(२) उदात्त, अनुदात्त–ये वस्तुतः स्वरों के गुण होते हैं, तथापि लोक में जैसे हम "उच्च स्वर में बोलो" कहते हैं, उसी प्रकार उदात्त अनुदात्त को भी कई बार स्वर कह दिया जाता है । यहाँ उदात्त वर्ण को उच्च स्वर में बोला जाता है – **उच्चैरुदात्तः** (अष्टाध्यायी १।२।२९), और अनुदात्त वर्ण को नीचे स्वर में – **नीचैरनुदात्तः** (१।२।३०) । इसके साथ ही साथ, एक अन्य मिश्रित स्वर होता है, जिसकी पहली आधी मात्र उदात्त होती है और शेष अनुदात्त (**तस्यादित उदात्तमर्धह्रस्वम्** (१।२।३२)। इसको स्वरित कहा जाता है – **समाहारः स्वरितः** (१।२।३१) । अब आजकल बड़े यत्न से अध्यापक समझाते हैं कि ये गुण स्वरों के ही होते हैं, व्यञ्जनों के नहीं, जैसे यह कोई चमत्कारी बात हो । परन्तु यदि आपने पहला बिन्दु हृदयंगम कर लिया है, तो आपको तुरन्त स्पष्ट हो जाएगा कि व्यञ्जन का उच्चारण तो इतना लघु होता है कि उसमें ऊंचे वा नीचे स्वर का स्थान ही नहीं है ! स्वर-वर्ण में ही हम ये गुण पा सकते हैं । स्वयं शब्दों का उच्चारण करके देखें कि क्या आप व्यञ्जन को ऊंचा या नीचा बोल सकते हैं । यदि आपको 'क' के उच्चारण में यह स्पष्ट नहीं हो रहा, तो 'अक्' के उच्चारण में तो अवश्य स्पष्ट हो जाएगा ! इसलिए इस अंश में कोई भी विचित्रता नहीं है – यह केवल स्पष्ट बात को शब्दों में कह रहा है ।

(३) षड्ज, ऋषभ, आदि–वैदिक मन्त्रों के ऊपर लिखा पाया जाता है – **षड्जः स्वरः, निषादः स्वरः**, इत्यादि । ये ही लोक में **'स रे ग म प धा नि'** की सरगम के रूप में जाने जाते हैं । ऊंचे या नीचे पदों का प्रयोग न करके, यहाँ स्वर का स्तर परिभाषित है । ये 'ऊंचे' और 'नीचे' पद भी दो प्रकार से प्रयुक्त होते हैं –ध्वनि का जोर से अथवा हल्के से बोलना, अथवा 'प धा नि' या 'स रे ग' होना । अब कौन-सा अर्थ कहाँ लिया जाए ? इस विषय में मैंने कोई स्पष्ट मत नहीं पाया । इसी प्रकार मन्त्रों के ऊपर लिखे स्वर का क्या अर्थ है, यह भी स्पष्ट नहीं होता । फिर मैंने विचार किया कि यदि षड्ज आदि सरगम है, तो उदात्त व अनुदात्त से जोर से और मन्द बोलने का अर्थ होगा । मेरे अनुसार, वैदिक मन्त्र पर लिखा स्वर वह एक स्वर होता है जिसमें सम्पूर्ण मन्त्र को उच्चारित करना होता है । उस स्वर को जोर से बोलने से वह उदात्त हो जाता है, और धीमे बोलने से अनुदात्त । अब सम्भव है कि एक स्वर में इतने लम्बे मन्त्र का उच्चारण करना कठिन हो, परन्तु पाणिनि ने स्वयं 'एकश्रुति' पद द्वारा एक स्वर से उच्चारण करने का निर्देश दिया है, और उसे यज्ञकर्म में मन्त्र-पठन में प्रयोग करना बताया है (**यज्ञकर्मण्यजपन्यूखनामसु**) (१।२।३४) । प्रातिशाख्य ग्रन्थों में इसे प्रचय भी कहा जाता है। प्रत्युत वेद के सामान्य उच्चारण के लिए भी एकश्रुति का विधान है–**विभाषा छन्दसि** (१।२।३६) । यह स्वर क्या हो, सो पाणिनि कहते हैं –**एकश्रुति दूरात् सम्बुद्धौ** (१।२।३३)–अर्थात् दूर से पुकारने के लिए एकश्रुति का प्रयोग होता है। अब दूर से बुलाने में तो हम आवाज ऊंची ही करते हैं, सो यहाँ उदात्त अथवा उदात्ततर य समझना सही होगा । तो क्या यह सम्भव है कि यज्ञकर्म में मन्त्र पर निर्दिष्ट स्वर में जोर से बोलकर, एकश्रुति में, मन्त्र पढ़ा जाना चाहिए? क्योंकि आज तक यह विषय इस प्रकार समझा नहीं गया है, इसलिए इस के प्रयोग के विषय में कहना कठिन है । मैं स्वयं संगीतज्ञ भी नहीं हूं । परन्तु अवश्य ही इस विषय पर विचार

की आवश्यकता है, विशेषकर वैदिक मन्त्रों पर लिखे स्वर का क्या अर्थ है, यह जानना अत्यावश्यक है ।

संयोगः–स्वर व व्यञ्जन को सम्यक् समझ लेने पर अष्टाध्यायी में संयोग भी भली प्रकार समझ लेना चाहिए । इसका परिभाषा सूत्र है– **हलोऽनन्तराः संयोगः** ।।१।१।७।। –अर्थात् जब बिना अन्तर के, एक के बाद एक, व्यञ्जन प्राप्त होते हैं, तो उस समूह को संयोग कहते हैं, जैसे –'प्रयास' में 'प्र' संयोग संज्ञक है। अब यहाँ स्वरों का निषेध क्यों हुआ? वह इसलिए कि स्वर जब मिलते हैं तो अधिकतर वे एक के बाद एक नहीं पढ़े जा सकते – वे एक नए स्वर को जन्म देते हैं, जैसे कि 'महेश' में आ और ई मिलकर ए बन जाते हैं । **'नमउक्तिं'** आदि संस्कृत में कुछ गिने-चुने ही अपवाद हैं । व्यञ्जनों में ऐसा मेल सम्भव नहीं है । हाँ, उनमें थोड़ा विकार आ सकता है (जैसे– क् का ग् हो जाना), परन्तु वे अपना अस्तित्व नहीं छोड़ सकते । इसलिए वे एक के बाद एक जुड़ जाते हैं, जैसे – इन्द्र = इ न् द् र् अ । यहाँः 'न् द् र्' संयोग-संज्ञक हैं।

लघु-गुरु मात्रा व संयुक्त अक्षरों का उच्चारण–छन्द में विशेषकर हमें लघु-गुरु अक्षरों का ध्यान रखना होता है । ह्रस्व स्वर को 'लघु' कहा जाता है (ह्रस्वं लघु ।।१।४।१०।।), परन्तु यदि उस ह्रस्व स्वर के पश्चात् संयुक्ताक्षर अथवा अकेला व्यञ्जन होता है, तो वह गुरु हो जाता है (संयोगे गुरु ।।१।४।११।।)। गुरु द्विमात्रिक होता है, जैसा कि दीर्घ अक्षर होता है (दीर्घं च ।।१।४।१२।।) । अब जब छन्द पढ़ाया जाता है, तो मेरे अनुभव में वर्णों को इस प्रकार बांटा जाता है –

यदि वाक्य है–उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः, तो मात्रओं का विभाजन इस प्रकार दर्शाया जाता है – उ क्ता व स न्त ति ल का त भ जा ज गौ गः, जो क्रमशः हुए (गुरु के लिए 'गु', लघु के लिए 'ल') – गु गु ल गु ल ल ल गु ल ल गु ल गु गु । इस प्रकार के अक्षर विभाजन में शिक्षक को बार-बार छात्रों को बताना पड़ता है कि 'उ' इसलिए गुरु है कि उसके आगे संयोग है, अथवा अकेला व्यञ्जन है, जैसे कि 'अम्' में : फिर यह बताना पड़ता है कि 'इन्द्र' जैसे शब्द में 'र' लघु ही है, क्योंकि ऐसा लगता है कि एक नकार इ के साथ जाना चाहिए और दूसरा व्यञ्जन द् र के साथ, जिससे दोनों ही गुरु हो जाएं ! इस उलझन को दूर करने के लिए सदैव अक्षरों को इस प्रकार अलग करना चाहिए जिस प्रकार उनका गुरुत्व वा लघुत्व स्पष्ट हो, जैसे – उक् ता व सन् त ति ल का त भ जा ज गौ गः, अथवा इन्द् र । यह लिखने का प्रकार कृत्रिम नहीं है, अपितु व्यञ्जनों का उच्चारण इसी प्रकार होता है, जैसा कि १।४।११ में निहित है । यह नियम बिल्कुल बोलने की व्यवस्था का अनुसरण करता है । इससे यह हुआ कि हलन्त अक्षरों को बोलते समय हमें उनको पूर्व स्वर के साथ जोड़ना चाहिए। पश्चात् स्वर के साथ व्यञ्जन बहुत कम शब्दों में जुड़ते हैं, जैसे कि 'स्वर' शब्द में, परन्तु यहाँ पर भी 'स्व' लघु ही माना जाएगा, गुरु नहीं । इसमें कारण यह है कि उसको बोलने में एक मात्रा ही लगती है, दो नहीं, जैसा कि 'अस् ति' के 'अस्' बोलने में दो मात्राएं हो जाती हैं, क्योंकि अ के अनन्तर हमें स् को बोलने में समय लगता है, परन्तु संयुक्त व्यञ्जन एक ही मात्रा का समय लेते हैं । इस प्रकार यह मात्राओं का गिनना पाणिनीय सूत्र के अनुसार है और बहुत ही वैज्ञानिक है। यदि उपर्युक्त प्रकार से हम शब्दों को पढ़ेंगे, तो संयुक्त अक्षरों को पढ़ने में कभी न लड़खड़ाएंगे और मात्र गिनने में भी कभी गलती न करेंगे ।

स्वरित पर विचार–स्वरित के विषय में एक चिन्तन शेष है – स्वरित बनाया क्यों जाता

है? जब उसमें भी उदात्त और अनुदात्त स्वर ही हैं, तो उच्चारण में यह कठिनता लाने का क्या प्रयोजन है? और यह भी कि उदात्त के परे अनुदात्त का स्वरित होता है, तो उदात्त के परे रहते पूर्व अनुदात्त का स्वरित क्यों नहीं होता? वैसे ये गायन से सम्बद्ध विषय हैं, इसलिए मेरी पहुँच यहाँ कम है, तथापि मुझे प्रतीत होता है कि उच्च स्वर के पश्चात् नीचे स्वर में बोलने में श्रवणमाधुर्य का ह्रास होता है, इसलिए निचले स्वर वाले की पूर्व अर्धमात्रा भी उच्च स्वर में बोलकर, उसे निचले स्वर से अगली अर्ध (या अधिक) मात्रा से जोड़ दिया जाता है । एक ही अक्षर में यह ऊंच-नीच अटपटी नहीं लगती, सम्भवत: यह यहाँ कारण है । जिनको इस तर्क में संशय हो, उनको यह भी विचार करना चाहिए कि सरगम के जो स्वर हैं उन्हें किस प्रकार चुना गया? किन्हीं दो स्वरों के बीच में अनन्त अन्य स्वर होते हैं, जिन्हें वाणी से बोला भी जा सकता है । फिर ये ही स्वर कैसे चुने गए? पश्चिम में इस विषय पर अन्वेषण करने से ज्ञात हुआ कि इन स्वरों और इनसे बनी रचनाओं में कहीं अधिक मधुरता होती है । ऐसे ही अन्वेषण की यहाँ आवश्यकता है ।

दूसरे प्रश्न के उत्तर में, नीचे से ऊपर ले जाने के लिए भी पाणिनि ने एक बीच का स्वर नियमित किया है–**उदात्तस्वरितपरस्य सन्नतर:** (१।२।४०) –अर्थात् जिस अनुदात्त के परे उदात्त अथवा स्वरित हो (जो वास्तव में पूर्व अर्धमात्र से उदात्त ही होता है !), तो अनुदात्त उदात्त के निकट स्वर वाला हो जाए, अर्थात् उदात्त और अनुदात्त के बीच का स्वर हो जाए । यहाँ वैयाकरण **'सन्नतर:'** से **'अनुदात्ततर'** का ग्रहण करते हैं, जिसका व्याकरणविधि से 'अनुदात्त से अधिक अनुदात्त' होना चाहिए । इससे पश्चात् आने वाले उदात्त के उच्चारण में और कष्ट होगा और श्रवणमाधुर्य भी कम हो जाएगा । इसलिए यह अर्थ मुझे सही नहीं लगता। सूत्रानुसार भी **'सन्नतर:'** से **'उदात्त के निकटतर'** लेना अधिक उपयुक्त है, ऐसी मेरी मति है। प्रातिशाख्य ग्रन्थों में इसे **निघात** नाम से पुकारा जाता है।

विषय को पूर्ण करने के लिए एक और स्वर को भी देख लेते हैं जो कि पाणिनि ने बताया है–**उच्चैस्तरां वा वषट्कार:** (१।२।३५) –अर्थात् यज्ञकर्म में **वौषट्** शब्द का उच्चारण उदात्ततर हो, अर्थात् उदात्त से भी कुछ ऊंचा हो । यह स्वर केवल इसी स्थिति में प्रयोग में आता है।

स्वर-विषय को भी वैज्ञानिक दृष्टि से देखना अत्यावश्यक है। जिस प्रकार सन्धि उच्चारण को सरल करने के लिए होती है, उसी प्रकार स्वर-परिणाम भी उच्चारण को सरल व मधुर करने के लिए होता है। उससे अर्थ भी शीघ्र ग्रहण होता है, जिनमें से मुख्य नियम है–उदात्त स्वर से पद या पदांश के महत्त्व का ज्ञान होना। अनेक इन कारणों से, स्वर-विज्ञान को हृदयंगम करना वेदों को समझने के लिए अनिवार्य है। ❑❑

- वचन रूपी जो बाण मुख से निकलते हैं, उन बाणों द्वारा घायल व्यक्ति रात दिन सोच करता है। वे बाण केवल मर्मस्स्थल में चोट पहुँचाने वाले होते हैं, किसी दूसरी जगह चोट नहीं पहुँचाते। इसलिए बुद्धिमान् व्यक्ति कभी भी कटु वचनों का किसी के प्रति व्यवहार नहीं किया करते। *–विदुरनीति*
- कार्य करने से पहले उसके परिणाम पर विचार कर लेना चाहिए। बिना विचारे शीघ्रता से किए गए काम का फल जीवन भर हृदय को जलाता रहता है तथा काँटे की तरह चुभता रहता है। *–भर्तृहरि*

कितना खतरनाक है ये १२ सेकंड का जहर

–राजीव चौधरी (मो०–९५४००२९०४४)

सोशल मीडिया ने लोगों की जिंदगियों को बहुत आसान बनाया है, पर उतना ही मुश्किल भी कर दिया है। इसमें कोई शक नहीं कि सोशल मीडिया ने लोगों को लोगों से जोड़ने का काम किया है, लेकिन तोड़ने का भी काम किया है। वर्षों सोशल मीडिया का प्रयोग करने के बाद हम इस बात को दावे के साथ कह सकते हैं कि एक क्रान्तिकारी डिजिटल प्लेटफार्म अब लोगों को मानसिक रूप से पंगु बना रहा है। यानि कैसे हमें खुद की तुलना दूसरों से करने के लिए मजबूर कर देता है? शायद लोग अभी सोशल मीडिया की चकाचौंध में इसे महसूस ना कर पा रहे हों, लेकिन शोध बता रहे हैं कि हमें पता भी नहीं चलता और हम तनाव, चिंता और डिप्रेशन का शिकार हो जाते हैं।

आज इस भागदौड़ भरी जिन्दगी में अब लोगों को शोर्ट विडियो पसंद आने लगे हैं, क्योंकि उनके पास टाइम की कमी कहो या लम्बी विडियो बोर करती है। इसके लिए इन्स्टाग्राम, फेसबुक और यूट्यूब से लेकर बहुत सारे प्लेटफार्म हैं। जब विडियो देखना शुरू करते हैं तो एक के बाद एक विडियो सामने आने लगते हैं और यूजर्स देखते चले जाते हैं। कब उनका एक या दो घंटा इसमें व्यतीत हो गया उन्हें पता ही नहीं चलता। जबकि वो शोर्ट विडियो इस कारण देखने चला था कि लम्बी विडियो देखने का उसके पास टाइम नहीं था।

अब ध्यान दीजिये इसमें होता क्या है? नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हेल्थ एंड न्यूरो–साइंस और तंत्रिका विज्ञान संस्थान के डॉक्टर इस पर शोध कर रहे हैं। उन्होंने कुछ दिलचस्प उदहारण दिए हैं। वो कहते हैं कि लोग सिर्फ एक 'यूजर' हैं और ध्यान रखिये 'यूजर' शब्द का इस्तेमाल सिर्फ दो धंधों में होता है, एक इंटरनेट में और दूसरा ड्रग में। उन्होंने जो उदहारण दिए वो चौंकाने वाले हैं क्योंकि हो सकता है यूजर्स आपके भी आस–पास हो आपके घर में भी हो।

पुनीत परिवार का इकलौता बच्चा है, दसवीं क्लास में पुनीत के ९५ प्रतिशत अंक आये थे। घर में खुशी का माहौल था तो पुनीत को परिवार ने एक फोन गिफ्ट किया। पुनीत ने भी तुरंत एफ० बी० से लेकर इन्स्टा तक अपने अकाउंट बनाये और शॉर्ट विडियो देखने की लत लग गई। शॉर्ट विडियोज वॉच करने से पुनीत के दिमाग के कॉग्निटिव फंक्शन बुरी तरह प्रभावित हुए। अब पुनीत को कुछ भी लंबे समय तक याद नहीं रहता। पुनीत के पैरेंट्स की चिंता तब और बढ़ी, जब उसके १२वीं के बोर्ड एग्जाम में ५० फीसदी अंक भी नहीं आ पाए, जबकि वह क्लास का टॉपर था।

पुनीत कोई इकलौता बच्चा नहीं, जो इस तरह की परेशानी का शिकार है। १४ साल के मनीष कुमार के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। उसके पैरेंट्स ने देखा कि उनका बच्चा पढ़ाई में लगातार कमजोर होता जा रहा है। उन्होंने मनीष से बात की तो पता चला कि वह क्लास में ध्यान ही नहीं लगा पाता। काउंसलिंग में सामने आया कि इसके पीछे वजह थी, शॉर्ट विडियोज। उसका अटेंशन स्पैन ५ मिनट से भी कम हो गया था। इसमें सुधार के लिए लगातार काउंसलिंग सेशन और ऐक्टि–

विटीज कराई जा रही है ताकि वह शोर्ट विडियो के दुष्प्रभाव से बाहर आ सके।

असल में नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हेल्थ एंड न्यूरोसाइंस के डॉक्टर बता रहे हैं कि मस्तिष्क का वह हिस्सा, जो निर्णय लेने और आवेग नियंत्रण के लिए जिम्मेदार है, वो इस उम्र में पूरी तरह से विकसित नहीं होता है। इसलिए बच्चे इन विडियोज के वॉचिंग पीरियड को कंट्रोल नहीं कर पाते, और ना ये तय कर पाते हैं कि क्या देखना है?

इसके अलावा कई अध्ययनों में सामने आया है कि इंसानों का औसत स्पैन अटेंशन तेजी से नीचे गिरा है। यह साल २००० में करीब १२ सेकेंड था, जो हाल के वर्षों में घटकर ८ सेकेंड ही बचा है। अटेंशन स्पैम का मतलब है, आप किसी काम में बिना भटके कितनी देर तक अपना ध्यान लगाए रख सकते हैं। ये सब क्यों हो रहा है? दरअसल लंबे वीडियोज में, शॉर्ट विडियोज से एकदम उलट मामला है। लंबे विडियोज में कहानी और कैरेक्टर का डिवेलपमेंट पर अधिक जोर होता है, वहीं, शॉर्ट विडियोज में मुख्य रूप से बिहैवियर या ऐक्शन बेस्ड चीजें होती हैं, यानि इससे दिमाग तुरंत रिजल्ट का आदी हो जाता है। जो बच्चों को शॉर्ट टेंपर्ड और शॉर्ट स्पैन बनाता है। वो शॉर्ट अटेंशन स्पैन हमारी मेमोरी, भाषा और दिमाग के विकास पर बुरा असर डालता है। इससे प्रभावित बच्चे लंबे समय तक टिककर पढ़ नहीं पाते। उनकी बोली में भाषा में अजीब से बदलाव आ जाते हैं। साथ ही, उनका दिमाग भी ठीक तरह से विकसित नहीं हो पाता क्योंकि दिमाग की मेहनत लगभग समाप्त हो जाती है। उसे जो भी मिल रहा है वो एकदम तैयार माल है।

इसे समझने के लिए थोड़ा पीछे चलिए। एक जमाना था, जब बच्चे आपस में मिलकर नोट्स बनाते थे। अपने नम्बर चेक करते थे। वो एक दूसरे से परीक्षा सेलेबस, सब्जेक्ट सम्बन्धित बातें किया करते थे। लेकिन अब रील की बीमारी इतना आगे बढ़ चुकी है कि बच्चे नोट्स बनाने के बजाय रील बना रहे हैं। और परीक्षा के अंको की जगह लाइक और व्यूज देख रहे हैं।

अगर लाइक और व्यूज उसकी अपेक्षा से कम आते हैं.तो कई बार यूजर्स व्यूज के लिए स्टंट का रास्ता चुनता है। दिल्ली के सिग्नेचर ब्रिज पर ऐसी घटनाएं प्रतिदिन घटती हैं। वहाँ बाइक से रील बनाते वक्त युवा खुद तो हादसे का शिकार होते ही हैं, दूसरों को भी लपेट लेते हैं। ऐसे मामलों को देखते हुए हॉलिस्टिक वेलनेस सेंटर की डॉक्टर डॉ॰ रेखा आहूजा बताती हैं कि ज्यादा देर तक शॉर्ट विडियोज देखने में हम रिपीटेड कंटेंट देखते हैं। इसमें ट्रेंड के हिसाब से कंटेंट बनते हैं, सभी एक जैसे होते हैं। जैसे, कोई गाना ट्रेंड कर रहा है तो उस गाने पर ढेरों लोगों ने एक ही तरह के डांस स्टेप्स में विडियोज बनाए होते हैं। कोई नया डायलोग आये तो उसपर भी बस चेहरे बदलते है कंटेंट वही रहता है। लेकिन लोग देखते चले जाते हैं जो माइंड की क्रिएटिविटी को बुरी तरह प्रभावित करता है।

घटना राजस्थान के पाली की है। यहाँ एक युवा योगेश को भी रील बनाने का बहुत शौक था। इंस्टाग्राम पर रोजाना एकाध रील अपलोड करता था, व्यूज, कमेंट मिलने पर खुश होता था। रील बनाने में वह इतना डूबा रहता था कि पढ़ाई तो दूर, वो खाना-पीना तक भूल जाता था। एक रोज उसके पिता ने उसका फोन छीन लिया, योगेश ने गुस्से में आकर आत्महत्या कर ली। दूसरा पिछले दिनों फर्रुखाबाद के तराई इलाके में एक २४ साल की लड़की ने इन्स्टा पर रील बनाने से रोकने पर अपने दो छोटे भाइयों पर हमला कर दिया था। उनमें से एक का गला घोटने का भी

(शेष पृष्ठ २७ पर)

॥ ओ३म् ॥

पेरियार – दलितोद्धारक या हिन्दू-द्वेषी !

–राजेशार्य आट्टा पानीपत-१३२१२२, (मो०: ०९९९१२९९३१८)

दलितोद्धारक के रूप में डॉ० अम्बेडकर के बाद जिनका नाम लिया जाता है, वे हैं रामास्वामी पेरियार। चेन्नई के एम० वेंकटेशन ने तमिल में एक लघु पुस्तक लिखी है–"ई० वी० रामास्वामी नायकरिन मरुपक्कम' (पेरियार का दूसरा चेहरा)। हिन्दी में इसका अनुवाद अरुण लवानिया ने किया है। इसमें लिखा है कि पेरियार ने दलितों के लिये कुछ भी नहीं किया, बल्कि उन्हें दोयम दर्जे का ही बनाये रखा। अगर पेरियार सौ प्रतिशत ब्राह्मण विरोधी थे तो अस्सी प्रतिशत दलित-विरोधी भी थे।

हुआ यह कि वी० वी० एस० अय्यर ने विशेष रूप से पकाये भोजन को चेतन माँ देवी गुरुकुलम् के दो ब्राह्मण विद्यार्थियों को दे दिया। यह घटना तमिलनाडु में बड़ा मुद्दा बन गई। तुरन्त इसका बहाना खड़ा कर सर्वप्रथम पेरियार ने ब्राह्मण और गैर ब्राह्मण का हौआ राज्य में खड़ा करना शुरु कर दिया। एक राष्ट्रवादी कांग्रेसी व संस्कृत के उत्कृष्ट विद्वान गवियकंद गणपथि सास्तुगल अय्यर ने इस मुद्दे के समाधान और सभी को समान अधिकार देने के लिए सुझाव दिया कि यद्यपि गुरुकुल में एक भी दलित विद्यार्थी नहीं है फिर भी एक दलित को गुरुकुल का बावर्ची नियुक्त किया जाए। जिसके हाथों से पकाया भोजन सभी विद्यार्थी खायें। पर पेरियार ने कहा कि वो इस सुझाव को कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे। उन्होंने प्रश्न खड़े किये कि कैसे दलित का पकाया भोजन शूद्र (गुरुकुल का विद्यार्थी) खा सकता है! यह उनकी दलित विरोधी मानसिकता थी, जिसका पालन उन्होंने आजीवन किया। हास्यास्पद रूप से आज भी पेरियार को दलितों का मसीहा बताकर लोगों को बरगलाया जाता है। यह झूठ का पुलिंदा मात्र है।

अब देखिये, पेरियार ब्राह्मण-विरोधी कैसे बने ! १९१९ ई० में वे राजनीति में आये, तब वे राष्ट्र भक्त और आध्यात्मिक थे। उन्होंने एक पत्रिका 'नेशनलिस्ट' में लेख लिखकर आर्य-द्रविड़ विभाजन के सिद्धान्त को सिरे से नकारते हुए इसे धोखा बताया। १९१६ में बनी जस्टिस पार्टी (जिसमें सभी अंग्रेजों के पिट्ठू थे) का भी उन्होंने विरोध किया। फिर अचानक पेरियार ने जस्टिस पार्टी से संबंध बनाने शुरू किये। इससे उनकी प्रसिद्धि और प्रचार बढने लगा। शनैः शनैः पेरियार अंग्रेजों के बौद्धिक प्यादा हो गये।

अपनी हिन्दुत्व विरोधी रणनीति के तहत उसने सर्वप्रथम रामायण को नीचा साबित करने के लिए अनेक पुस्तकें लिखीं। महाभारत को भी नहीं बख्शा गया। पेरियार ने एक पुस्तक 'कँब रस्म' लिखकर रामायण को बेहद अश्लील तरीके से प्रस्तुत किया। नीचता की पराकाष्ठा कर उसने संत कवि कंब, भगवान राम और देवी सीता को जी भर कर गालियाँ दीं। इसे वैष्णवों पर हमला मानकर शैव ताली बजा रहे थे। कुछ समय बाद पेरियार ने तमिल शैव 'पेरिया पुराणम्'

पर भी हमला बोल दिया। तब सभी मतावलंबियों ने पेरियार का विरोध किया। एक एक कर सभी हिंदू ग्रन्थ पेरियार के निशाने पर आने लगे। यहाँ तक कि उसने तिरुक्कुरल को भी हर संभव गालियाँ देनी प्रारम्भ कर दी। पेरियार के शब्दों में तिरुक्कुरल "सोने की थाली में परोसी गयी मानव विष्ठा है।"

प्राचीन तमिल महाकाव्य सिलापथिकरम के रचनाकार इलांगो अडिगल, तोल्कापियर आदि जितने महापुरुषों को तमिल हिन्दू हृदय से पूजते थे, उन सभी को पेरियार अपमानित करने लगा।

इसके बाद उसने राम के पुतले का दहन किया। विनयागर (गणेश) मूर्ति को सलेम जिले में जनता के मध्य तोड़ा। पेरियार के कहने पर उसके गुंडा ने हर तरह के अत्याचार हिन्दू मान्यताओं पर करना शुरू किये। पेरियार ने संस्कृत और तमिल को बाँट दिया। दलितों के दिमाग में यह बात ठूंस दी कि संस्कृत विदेशी भाषा है और दलितों और संस्कृत का कोई नाता नहीं है। जबकि दलितों की एक उपजाति वल्लुवर (ब्राह्मणों से संस्कृत पढे बिना ही) आज भी हिंदू पंचांग संस्कृत में लिखती है।

तमिलनाडु में दलित और अन्य जातियाँ सदा से मिलजुलकर रहा करती थीं। पेरियार इस सद्भाव को तोड़कर समाज को दलित और गैर दलित में बाँटने की साजिश रच रहा था। तमिलनाडु के अनेक गाँवों में, जहाँ एक भी ब्राह्मण आबाद नहीं था, वहाँ जातिगत झगड़े और हिंसा हुआ करते थे। पेरियार इन सभी के लिए ब्राह्मणों को जिम्मेदार ठहराता था। मुडुकुलपुर दंगे तमिलनाडु की मझोली जातियों के समूह मुक्कलदार और देवेन्द्र कुला वेल्लार दलितों के बीच ही हुए थे। इस दंगे में दो व्यक्ति मारे गये थे। पेरियार ने एक प्रेस विज्ञप्ति जारी कर कहा–"सभी युवा खून से हस्ताक्षर कर इस बारे में घोषणा करें कि वो गाँधी की मूर्तियाँ तोड़ेंगे और ब्राह्मणों को मारेंगे।"

१९४२ में किलवेन मनि दंगों में नायडू जाति वालों ने ४४ दलितों को जिन्दा जलाकर मार डाला था। इस पूरे क्षेत्र में एक भी ब्राह्मण नहीं रहता था। यहाँ भी पेरियार ने प्रेस विज्ञप्ति जारी कर दंगों के लिये ब्राह्मणों को दोषी मानते हुए मांग की–"जातियों को तोड़ने के लिए ब्राह्मणों का समूल नाश कर दिया जाये।"

१९४४ में पेरियार ने एक प्रस्ताव पारित किया–"अंग्रेजों को भारत छोड़कर वापस नहीं जाना चाहिए। लेकिन यदि ऐसा करना ही पड़े तो वे भारत के सभी राज्यों को आजादी दे दें। बस तमिलनाडु ही अंग्रेजों के राज्य के अधीन रहे।"

इस प्रस्ताव के सामने आते ही तमिलनाडु की जनता की आँखें खुलीं और उन्हें अहसास हुआ कि पेरियार और उसके संगठन द्रविड़ कड़गम और जस्टिस पार्टी के समस्त कार्यकलापों के पीछे अंग्रेजी राज का ही हाथ है। ये दोनों संगठन ब्रिटिश राज की ही उपज थे।

पेरियार न तो डॉ० अम्बेडकर की तरह (दलित होने के कारण) जातिवाद के थपेड़ों से घायल हुए थे और न गरीबी में पले-बढ़े थे। वे अच्छे खाते-पीते परिवार से राजनीति में कूदे थे और अंग्रेजों के षड्यंत्र को पूरा करने वाले हिन्दू-द्वेषी थे, पर वास्तविकता से अपरिचित भोले लोगों में पेरियार को दलित उद्धारक बताने और डॉ० अम्बेडकर के साथ जोड़ने का कुचक्र आज भी जारी है। ❑❑

हम महर्षि मनु पर अभिमान क्यों न करें ?

–पण्डित चमूपति

महर्षि मनु और नीत्शे

- आज यह बात तो लोक में प्रसिद्ध है कि 'आर्य-दर्शन' संसार भर के दर्शन में सर्वोच्च हैं । परन्तु हमारे आचार-शास्त्र के विषय में यह प्रशंसा के वाक्य नहीं किये जाते ।
- हम भी इसी में मस्त हो रहते हैं कि हमने विचार में उन्नति की है और आचार में ???

यह क्षेत्र हमारा नहीं । हम यह भूल जाते हैं कि 'धर्म नाम ही आचार का है।' जैसे संसार की समस्या सुलझाने में ऋषियों का मस्तिष्क संसार भर का नेता रहा है और जहाँ तक धर्म का सम्बन्ध आत्मा-परमात्मा की गहन ग्रन्थियों के सुलझाने से हैं, हम विचारक संसार के जाने-माने गुरु हैं, उसी प्रकार आचार-शास्त्र में भी हमारा स्थान किसी से पीछे नहीं ।

हम इस विषय में "अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना" अपने तथा अपनी जाति के लिए श्रेयस्कर नहीं समझते, किन्तु जर्मनी के प्रसिद्ध विचारक नीत्शे जो जर्मनी के वर्तमान शक्तियुग का प्रवर्तक हैं और जो राजनीति को कपट की दलदल से निकाल कर सूधी-खरी बातों पर आश्रित करना चाहता है, के पुस्तक **The Twilight of Idols** से उद्धरण प्रस्तुत करते हैं-:

One breathes more freely after stepping out of the Christian atmosphere of hospital and poisons into this more salubrious, loftier and more spacious world. What a wretched thing the New Testament is beside Manu, what an evil odour hangs around it !

अर्थात् ईसाई मत की रोगीशालाओं और विषों के वायुमण्डल से निकलकर मनुष्य इस (मनु के) स्वास्थ्यप्रद, उच्च तथा विशाल जगत् में श्वास लेता है । मनु के सामने नया नियम (बाइबल) क्षुद्र वस्तु है । इस पर दुर्गन्धि छाई है ।

एक और पुस्तक **The Will to Power** में यही महाशय लिखते हैं –

Manu's words again are simple and dignified. Virtue could hardly rely on her own strength alone. Really it is only the fear of punishment that keeps men in their limits and leaves every one in peaceful possession of his own.

अर्थात् मनु के शब्द खरे और आत्म-प्रतिष्ठायुक्त हैं । पुण्य केवल अपने बल पर आश्रित नहीं रह सकता। दण्ड के भय से ही मनुष्य अपनी सीमा में रहते हैं और प्रत्येक को शान्ति-पूर्वक अपना-अपना स्वत्व भोगने देते हैं।

इन्हीं महाशय नीत्शे की एक और पुस्तक **Antichrist** में यह वाक्य पाए जाते हैं :–

The fact that in Christianity 'holy' ends are entirely absent, constitutes my objection to the means it employes ----------. My feelings are quite the reverse when I read the Law-book of Manu----------an incomparably intellectual and superior work -----. It is replete with noble values, it is filled with a feeling of

perfection, with a saying of yea to life, and a triumphant sense of well-being in regard to itself and life. The sun shines upon the whole book. All those things which Christianity smothers, with its bottomless vulgarity-procreation, woman, marriage, are here treated with earnestness, with rever - ence, with love and confidence.

अर्थात् ईसाई मत में 'पवित्र' उद्देश्यों का सर्वथा अभाव है। यहाँ उसके प्रयुक्त किये साधनों पर मेरा आक्षेप है।....परन्तु जब मैं मनु का धर्मशास्त्र पढ़ता हूँ तो मेरे हृदय के भाव इसके सर्वथा विपरीत हो जाते हैं। ....यह पुस्तक विचारपूर्ण और उच्चतम पुस्तक है। ....यह श्रेष्ठ परखों से पूर्ण है। पूर्णता के भाव से भरा पड़ा है। जीवन को हाँ कहता है। जीवन के सम्बन्ध में इसका भाव स्वस्थता का विजयात्मक भाव है। जिन विषयों को ईसाई मत अपने अथाह गँवारूपन से दबा छोड़ता है, जैसे संतानोत्पत्ति, स्त्री, विवाह, उन पर (मनु के शास्त्र में) उत्साह, पूजा, प्रेम और विश्वासपूर्वक विचार किया गया है।

इसी पुस्तक से एक और उद्धरण देकर हम इस लेख को समाप्त करेंगे ।

नीत्शे लिखते हैं :-

I know of no book in which so many delicate and kindly things are to woman, as in the Law book of Manu, these old grey beards and saints have a manner of being gallant to woman which perhaps cannot be surpassed.

अर्थात् मुझे किसी और पुस्तक का ध्यान नहीं जिसमें स्त्रियों के प्रति इतने मृदु, दयापूर्ण भाव प्रकट किये गए हों, जितने मनु के धर्मशास्त्र में हैं। यह भूरी दाढ़ी सन्तजन स्त्रियों के प्रति ऐसे ढंग से (सत्कार) दर्शाते हैं कि उससे आगे स्यात् असम्भव है ।

पाठकों ने देख लिया कि भारत का धर्मशास्त्र भी आज जगत् का वैसा ही प्रशंसा-पात्र बन रहा है, जैसा कभी भारतीय दर्शन था। समाज का आधार धर्मशास्त्र हैं। उसके पढ़ने, समझने और उस पर आचरण करने की सारे मानव समाज को आवश्यकता है ।

- अब पाठक समझ गए होंगे कि ऋषि दयानन्द ने मनु को क्यों इतना सराहा है ! ईसाई मत के पक्षपात से जो विचारक, चाहे वह पाश्चात्य हो या प्राच्य, मुक्त होता जाएगा, वही मनु के गुण गाएगा। आजकल की शिक्षा के ईसाई रंग में रंगे जाने के कारण मनु के नियम लोगों की आँखों मे नहीं जँचते । परन्तु वास्तव में मानव प्रकृति के अनुकरण योग्य यदि कोई धर्मशास्त्र है तो वह है मनु का । इसमें काल्पनिक सिद्धान्त नहीं, क्रियात्मक सच्चाइयाँ हैं ।
- (पण्डित चमूपति का यह लेख "आर्य" पत्र में प्रकाशित हुआ था। तद्नुसार-स्थान-लाहौर-तिथि-वैशाख १९७९ तदनुसार मई १९२३ (अंक १) (प्रस्तुति-पंकज शाह)

- **गौ आदि पशुओं की रक्षा से संसार का बड़ा उपकार है ।**
- **गौ आदि पशुओं की रक्षा सभी प्राणियों के सुख के लिये आवश्यक है।**
- **गौ आदि पशुओं के नाश होने से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है।**

(महर्षि दयानन्द द्वारा रचित-गो करुणानिधि पुस्तक से)

मनुस्मृति दहन दिवस बनाने वालों के पाखण्ड का खण्डन

—डॉ० विवेक आर्य (मो०-८०७६९८५५१७)

२५ दिसम्बर को देश में अनेक स्वयंभू संगठनों ने मनुस्मृति दहन दिवस के नाम पर मनुस्मृति जलाने का तमाशा किया। यह सर्व-विदित है कि जलाने वालों में ९९.९९% लोगों ने कभी जीवन में मनुस्मृति को पुस्तक रूप में देखा तक नहीं। पढ़ना और चिंतन करना तो बहुत दूर की बात है। उनमें से किसी को इस तथ्य की जानकारी नहीं है कि मनुस्मृति में जो श्लोक जातिवादी और नारी विषय में भ्रम उत्पन्न करते हैं। वो मिलावटी है। इसलिए विशुद्ध मनुस्मृति स्वीकार्य है। जातिवादी राजनीतिक पार्टियाँ इस मूल सत्य सिद्धान्त के विषय में कोई चर्चा नहीं करती। समाज को तोड़ने का प्रपंच मात्र करती है। इसलिए विशुद्ध मनुस्मृति अपनाएं, जातिवाद को भगाएं।

ब्राह्मण शब्द को लेकर भ्रांतियाँ एवं उनका निवारण—

ब्राह्मण शब्द को लेकर अनेक भ्रांतियाँ हैं। इनका समाधान करना अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि हिन्दू समाज की सबसे बड़ी कमजोरी जातिवाद है। अत: ब्राह्मण शब्द के सत्य अर्थ को न समझ पाने के कारण जातिवाद को बढ़ावा मिला है।

शंका १—ब्राह्मण की परिभाषा बतायें?

समाधान—पढने-पढ़ाने से, चिंतन-मनन करने से, ब्रह्मचर्य, अनुशासन, सत्यभाषण आदि व्रतों का पालन करने से, परोपकार आदि सत्कर्म करने से, वेद, विज्ञान आदि पढने से, कर्तव्य का पालन करने से, दान करने से और आदर्शों के प्रति समर्पित रहने से मनुष्य का यह शरीर ब्राह्मण किया जाता है। —मनुस्मृति २।२८

शंका २—ब्राह्मण जाति है अथवा वर्ण है?

समाधान—ब्राह्मण वर्ण है जाति नहीं। वर्ण का अर्थ है चयन या चुनना और सामान्यत: वरणशब्द भी यही अर्थ रखता है। व्यक्ति अपनी रुचि, योग्यता और कर्म के अनुसार इसका स्वयं वरण करता है, इस कारण इसका नाम वर्ण है। वैदिक वर्ण व्यवस्था में चार वर्ण है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र।

ब्राह्मण का कर्म है विधिवत पढ़ना और पढ़ाना, यज्ञ करना और कराना, दान प्राप्त करना और सुपात्रों को दान देना।

क्षत्रिय का कर्म है विधिवत पढ़ना, यज्ञ करना, प्रजाओं का पालन-पोषण और रक्षा करना, सुपात्रों को दान देना, धन ऐश्वर्य में लिप्त न होकर जितेन्द्रिय रहना।

वैश्य का कर्म है पशुओं का पालन-पोषण, सुपात्रों को दान देना, यज्ञ करना, विधिवत अध्ययन करना, व्यापार करना, धन कमाना, खेती करना।

शूद्र का कर्म है सभी चारों वर्णों के व्यक्तियों के यहाँ पर सेवा या श्रम करना।

शूद्र शब्द को मनु अथवा वेद ने कहीं भी अपमानजनक, नीचा अथवा निकृष्ट नहीं माना है। मनु के अनुसार चारों वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र आर्य है। —मनु १०।४

शंका ३—मनुष्यों में कितनी जातियाँ है ?

समाधान—मनुष्यों में केवल एक ही जाति है। वह है "मनुष्य"। अन्य कोई जाति नहीं है।

शंका ४—चार वर्णों के विभाजन का आधार क्या है?

समाधान—वर्ण बनाने का मुख्य प्रयोजन

कर्म विभाजन है। वर्ण विभाजन का आधार व्यक्ति की योग्यता है। आज भी शिक्षा प्राप्ति के उपरान्त व्यक्ति डॉक्टर, इंजीनियर, वकील आदि बनता है। जन्म से कोई भी डॉक्टर, इंजीनियर, वकील नहीं होता। इसे ही वर्ण व्यवस्था कहते हैं।

शंका ५–कोई भी ब्राह्मण जन्म से होता है अथवा गुण, कर्म और स्वभाव से होता है?

समाधान–व्यक्ति की योग्यता का निर्धारण शिक्षा प्राप्ति के पश्चात ही होता है। जन्म के आधार पर नहीं होता है। किसी भी व्यक्ति के गुण, कर्म और स्वाभाव के आधार पर उसके वर्ण का चयन होता है। कोई व्यक्ति अनपढ़ हो और अपने आपको ब्राह्मण कहे तो वह गलत है।

मनु का उपदेश पढ़िए–

जैसे लकड़ी से बना हाथी और चमड़े का बनाया हुआ हरिण सिर्फ नाम के लिए ही हाथी और हरिण कहे जाते है वैसे ही बिना पढ़ा ब्राह्मण मात्र नाम का ही ब्राह्मण होता है।

–मनुस्मृति २।१५७

शंका ६–क्या ब्राह्मण पिता की संतान केवल इसलिए ब्राह्मण कहलाती है कि उसके पिता ब्राह्मण हैं?

समाधान–यह भ्रान्ति है कि ब्राह्मण पिता की संतान इसलिए ब्राह्मण कहलाएगी क्योंकि उसका पिता ब्राह्मण है। जैसे एक डॉक्टर की संतान तभी डॉक्टर कहलाएगी जब वह M.B.B.S. उत्तीर्ण कर लेगी। जैसे एक इंजीनियर की संतान तभी इंजीनियर कहलाएगी जब वह B. Tech. उत्तीर्ण कर लेगी। बिना पढ़े नहीं कहलाएगी। वैसे ही ब्राह्मण एक अर्जित जाने वाली पुरानी उपाधि है।

मनु का उपदेश पढ़िए–

माता-पिता से उत्पन्न संतति का माता के गर्भ से प्राप्त जन्म साधारण जन्म है। वास्तविक जन्म तो शिक्षा पूर्ण कर लेने के उपरान्त ही होता है। –मनुस्मृति २।१४७

शंका ७–प्राचीन काल में ब्राह्मण बनने के लिए क्या करना पड़ता था?

समाधान–प्राचीन काल में ब्राह्मण बनने के लिए शिक्षित और गुणवान दोनों होना पड़ता था।

मनु का उपदेश देखे–

वेदों में पारंगत आचार्य द्वारा शिष्य को गायत्री मंत्र की दीक्षा देने के उपरान्त ही उसका वास्तविक मनुष्य जन्म होता है। –मनुस्मृति २।१४८

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य, ये तीन वर्ण विद्याध्ययन से दूसरा जन्म प्राप्त करते हैं। विद्याध्ययन न कर पाने वाला शूद्र, चौथा वर्ण है। –मनुस्मृति १०।४

आजकल कुछ लोग केवल इसलिए अपने आपको ब्राह्मण कहकर जाति का अभिमान दिखाते है क्यूंकि उनके पूर्वज ब्राह्मण थे। यह संरासर गलत है। योग्यता अर्जित किये बिना कोई ब्राह्मण नहीं बन सकता। हमारे प्राचीन ब्राह्मण अपने तप से अपनी विद्या से अपने ज्ञान से सम्पूर्ण संसार का मार्गदर्शन करते थे। इसीलिए हमारे आर्यावर्त देश विश्वगुरु था।

शंका ८–ब्राह्मण को श्रेष्ठ क्यों माने?

समाधान–ब्राह्मण एक गुणवाचक वर्ण है। समाज का सबसे ज्ञानी, बुद्धिमान, शिक्षित, समाज का मार्गदर्शन करने वाला, त्यागी, तपस्वी व्यक्ति ही ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी बनता है। इसीलिए ब्राह्मण वर्ण श्रेष्ठ है। वैदिक विचारधारा में ब्राह्मण को अगर सबसे अधिक सम्मान दिया गया है तो ब्राह्मण को सबसे अधिक गलती करने पर दंड भी दिया गया है।

मनु का उपदेश देखें–

एक ही अपराध के लिए शूद्र को सबसे कम दंड, वैश्य को दोगुना, क्षत्रिय को तीन गुना और ब्राह्मण को सोलह या १२८ गुणा दंड मिलता था। –मनु ८।३३७ एवं ८।३३८

इन श्लोकों के आधार पर कोई भी मनु

महाराज को पक्षपाती नहीं कह सकता।

शंका ९- क्या शूद्र ब्राह्मण और ब्राह्मण शूद्र बन सकता है?

समाधान–ब्राह्मण, शूद्र आदि वर्ण क्यूंकि गुण, कर्म और स्वाभाव के आधार पर विभाजित है। इसलिए इनमें परिवर्तन संभव है। कोई भी व्यक्ति जन्म से ब्राह्मण नहीं होता। अपितु शिक्षा प्राप्ति के पश्चात उसके वर्ण का निर्धारण होता है।

मनु का उपदेश देखें–

ब्राह्मण शूद्र बन सकता है और शूद्र ब्राह्मण हो सकता है। इसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य भी अपने वर्ण बदल सकते हैं। –मनुस्मृति १०।६४

शरीर और मन से शुद्ध–

पवित्र रहने वाला, उत्कृष्ट लोगों के सानिध्य में रहने वाला, मधुरभाषी, अहंकार से रहित, अपने से उत्कृष्ट वर्ण वालों की सेवा करने वाला शूद्र भी उत्तम ब्राह्मण जन्म और द्विज वर्ण को प्राप्त कर लेता है। –मनुस्मृति ९।३३५

जो मनुष्य नित्य प्रातः और सांय ईश्वर आराधना नहीं करता उसको शूद्र समझना चाहिए। –मनुस्मृति २।१०३

जब तक व्यक्ति वेदों की शिक्षाओं में दीक्षित नहीं होता वह शूद्र के ही समान है।

–मनुस्मृति २।१७२

ब्राह्मण–वर्णस्थ व्यक्ति श्रेष्ठ–अतिश्रेष्ठ व्यक्तियों का संग करते हुए और नीच–नीचतर व्यक्तिओं का संग छोड़कर अधिक श्रेष्ठ बनता जाता है। इसके विपरीत आचरण से पतित होकर वह शूद्र बन जाता है। –मनुस्मृति ४।२४५

जो ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य वेदों का अध्ययन और पालन छोड़कर अन्य विषयों में ही परिश्रम करता है, वह शूद्र बन जाता है। –मनुस्मृति २।१६८

शंका १०–क्या आज जो अपने आपको ब्राह्मण कहते हैं वही हमारी प्राचीन विद्या और ज्ञान की रक्षा करने वाले प्रहरी थे?

समाधान–आजकल जो व्यक्ति ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होकर अगर प्राचीन ब्राह्मणों के समान वैदिक धर्म की रक्षा के लिए पुरुषार्थ कर रहा है तब तो वह निश्चित रूप से ब्राह्मण के समान सम्मान का पात्र है। अगर कोई व्यक्ति ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होकर ब्राह्मण धर्म के विपरीत कर्म कर रहा है। तब वह किसी भी प्रकार से ब्राह्मण कहलाने के लायक नहीं है। एक उदहारण लीजिये।

एक व्यक्ति यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर है, शाकाहारी है, चरित्रवान है और धर्म के लिए पुरुषार्थ करता है। उसका वर्ण ब्राह्मण कहलायेगा चाहे वह शूद्र पिता की संतान हो। उसके विपरीत एक व्यक्ति अनपढ़ है, मांसाहारी है, चरित्रहीन है और किसी भी प्रकार से समाज हित का कोई कार्य नहीं करता, चाहे उसके पिता कितने भी प्रतिष्ठित ब्राह्मण हो, किसी भी प्रकार से ब्राह्मण कहलाने लायक नहीं है। केवल चोटी पहनना और जनेऊ धारण करने भर से कोई ब्राह्मण नहीं बन जाता। इन दोनों वैदिक व्रतों से जुड़े हुए कर्म अर्थात धर्म का पालन करना अनिवार्य है। प्राचीन काल में धर्म रूपी आचरण एवं पुरुषार्थ के कारण ब्राह्मणों का मान था।

इस लेख के माध्यम से मैंने वैदिक विचारधारा में ब्राह्मण शब्द को लेकर सभी भ्रांतियों के निराकरण का प्रयास किया हैं। ब्राह्मण शब्द की वेदों में बहुत महत्ता है। मगर इसकी महत्ता का मुख्य कारण जन्मना ब्राह्मण होना नहीं अपितु कर्मणा ब्राह्मण होना है। मध्यकाल में हमारी वैदिक वर्ण व्यवस्था बदल कर जाति व्यवस्था में परिवर्तित हो गई। विडंबना यह है कि इस बिगाड़ को हम आज भी ढो रहे हैं। जातिवाद से हिन्दू समाज की एकता समाप्त हो गई। भाई भाई में द्वेष हो गया। इसी कारण से हम कमजोर हुए तो विदेशी विधर्मियों के गुलाम बने। ❑❑

बड़ों से छोटी भूल

–स्वामी विवेकानन्द सरस्वती
कुलाधिपति–गुरुकुल प्रभात आश्रम टीकरी, भोलाझाल, मेरठ

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना के समय अनेक मनीषी विद्वानों ने महामना मालवीय जी से निवेदन किया कि आपके अथक पुरुषार्थ से जिस विश्वविद्यालय का निर्माण हो रहा है, उसके पाठ्यक्रम की भाषा हिन्दी होनी चाहिए, किन्तु राष्ट्र एवं हिन्दी के अनन्य उपासक होते हुए भी महामना ने इसे स्वीकार नहीं किया और वहाँ के पाठ्यक्रम की भाषा अंग्रेजी ही स्वीकृत हुई। यदि उस समय महामना मनीषियों के द्वारा दिए सुझाव को मान लेते तो जो आज हिन्दी के विरोध में स्वर उठ रहे हैं, सम्भवत: वे उठते ही नहीं और यदि उठते भी तो सर्वथा प्रभावहीन होते। हम इसे महामना की एक भयंकर भूल कह सकते हैं, क्योंकि यदि एशिया का सबसे बडा विश्वविद्यालय हिन्दी को अपनी भाषा बनाता तो उसकी गरिमा तथा महिमा तो बढती ही, साथ ही राष्ट्र का कितना बडा उपकार होता। हिन्दी विश्व की जानी-पहचानी भाषा होती। आज हिन्दी की दुर्दशा का एक कारण यह भी है कि हिन्दी के परम आराधक एवं भारतीय संस्कृति के उपासक व्यक्ति ने उस समय हिन्दी भाषा को महत्त्व नहीं दिया।

इसी प्रकार की बात वर्ग अर्थात् जाति के आधार पर किए जाने वाले आरक्षण के सम्बन्ध में भी है। राष्ट्र के परमभक्त भीमराव अम्बेडकर को भी लोगों ने संविधान निर्माण के समय यह सुझाव दिया था कि आरक्षण वर्ग (जाति) के आधार पर न होकर आर्थिक आधार पर होना चाहिए। इसका व्यापक प्रभाव होगा तथा बहुत लोग इससे लाभान्वित होंगे। वर्गवाद के कारण जो विषमता फैली है, आर्थिक आरक्षण से ही उसकी परिखा (खाई) पटेगी और परस्पर में सौहार्द एवं सौमनस्य का वातावरण बनेगा और जिस उद्देश्य से आरक्षण दिया जा रहा है, उसमें सफलता मिलेगी, किन्तु भीमराव अम्बेडकर इतने दूरदर्शी होते हुए भी इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सके। यद्यपि वे जानते थे कि वर्गगत आरक्षण से एक आरक्षित, अनारक्षित वर्ग बन जाएगा, जिनमें सतत संघर्ष चलता रहेगा और वर्गवाद को प्रश्रय मिलता रहेगा। इसीलिए उन्होंने संविधान में लिखा कि इस आरक्षण की नीति पर दस वर्ष के पश्चात् पुनर्विचार होना चाहिए। पुनर्विचार का अर्थ यही था कि यह नीति समाप्त होनी चाहिए, क्योंकि जो औषधि रोगी को स्वस्थ होने के लिए दी जा रही है। रोगमुक्त होने पर उस औषधि को देने का क्या औचित्य है।

संविधान के दुरुपयोग के सम्बन्ध में भीमराव अम्बेडकर ने राज्यसभा में एक बार स्वयं यह कहा था–'मेरे दोस्त कहते हैं कि संविधान को मैंने बनाया, लेकिन इसे जलाने वाला पहला व्यक्ति भी मैं ही होऊँगा।' आज हमें इस जातिगत आरक्षण के भयंकर परिणाम दृष्टिगोचर हो रहे हैं। जो लोग आरक्षण के कारण ऊँचे पदों पर गए और वे सर्वसाधन सम्पन्न हो गए, परन्तु वर्गवाद के कारण उनकी सन्तानें आज भी उस आरक्षण को छोड़ना नहीं चाह रहीं हैं। परिणाम स्पष्ट है कि जो लोग वास्तव में इसके पात्र हैं वे इससे वंचित हो रहे हैं। विषमता आज भी यथावत् बनी हुई है।

(शेष पृष्ठ २६ पर)

महर्षि की दूरदर्शिता !!!

१८७५ में मुम्बई में जब कई उत्साही सज्जनों ने स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के समक्ष नया 'समाज' स्थापित करने का प्रस्ताव रखा, तब उस दीर्घदृष्टा ऋषि ने अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हुए और उन लोगों को सावधान करते हुए कहा–

"भाई हमारा कोई स्वतन्त्र मत नहीं है। मैं तो वेद के अधीन हूँ और हमारे भारत में पच्चीस कोटि (उस समय की भारत की जनसंख्या) आर्य हैं। कई–कई बात में किसी–किसी में कुछ–कुछ भेद हैं, सो विचार करने से आप ही आप छूट जाएगा।

मैं संन्यासी हूँ और मेरा कर्तव्य यही है कि जो आप लोगों का अन्न खाता हूँ, इसके बदले जो सत्य समझता हूँ, उसका निर्भयता से उपदेश करता रहूँ। मैं कुछ कीर्ति का रागी नहीं हूँ। चाहे कोई मेरी स्तुति करे या निन्दा करे, मैं अपना कर्तव्य समझ के धर्म–बोध कराता हूँ। कोई चाहे माने वा न माने, इसमें मेरी कोई हानि लाभ नहीं है। ....आप यदि समाज से पुरुषार्थ कर परोपकार कर सकते हैं तो समाज स्थापित कर लो। इसमें मेरी कोई मनाई नहीं है। परन्तु इसमें यथोचित व्यवस्था न रखोगे तो आगे गड़बड़ाध्याय हो जाएगा।

मैं तो जैसा अन्य को उपदेश देता हूँ, वैसा ही आपको भी करूँगा और इतना लक्ष्य में रखना कि मेरा कोई स्वतन्त्र मत नहीं है और मैं सर्वज्ञ भी नहीं हूँ। इससे यदि कोई मेरी गलती आगे पाई जाए तो युक्तिपूर्वक परीक्षा करके इस को भी सुधार लेना। यदि ऐसा न करोगे तो आगे यह भी एक 'मत' (सम्प्रदाय) हो जाएगा और इसी प्रकार से 'बाबा वाक्य प्रमाणम्' करके इस भारत में नाना प्रकार के मतमतान्तर प्रचलित होके, भीतर–भीतर दुराग्रह रखके धर्मान्ध होके लड़कर नाना प्रकार की सद्विद्या का नाश करके यह भारतवर्ष दुर्दशा को प्राप्त हुआ है, इसमें यह भी एक मत बढ़ेगा।

मेरा अभिप्राय तो है कि इस भारतवर्ष में नाना मतमतान्तर प्रचलित हैं, तो भी वे सब वेदों को मानते हैं। इससे वेदशास्त्र रूपी समुद्र में यह सब नदी–नाव पुनः मिला देने से धर्म–ऐक्यता होगी और धर्म ऐक्यता से सांसारिक और व्यावहारिक सुधारणा होगी और इससे कला–कौशल आदि सब अभीष्ट सुधार होके मनुष्य मात्र का जीवन सफल होके अन्त में अपना धर्म बल से अर्थ, काम और मोक्ष मिल सकता है। (आर्ष दृष्टि) ❑❑

दयानन्द सन्देश परिवार की ओर से
पाश्चात्य नववर्ष की बहुत शुभकानाएँ ।
भारतीय नववर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा
(९ अप्रैल, २०२४)
को हर्षोल्लास के साथ मनायें !

दिनेश कुमार शास्त्री (व्यवस्थापक)

स्वर्ग, नरक–स्वर्ग या नरक नाम के कोई विशेष स्थान नहीं हैं, अपितु सुख विशेष का नामं स्वर्ग और दुःख विशेष का नाम नरक है।

त्यागी चौ० पीरुसिंह जी

लेखक : स्वामी ओमानन्द जी महाराज

एक बार चौधरी साहब श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती के साथ जा रहे थे। पीछे से एक नाई यह कहता हुआ चल रहा था कि पीरुसिंह ने गुरुकुल के नाम पर इलाके को लूटकर अपना घर भर लिया। चौधरी साहब बड़े प्यार से उस नाई को अपने साथ अपने घर ले गए। पहले उसे खाना खिलाया, फिर अपना सारा घर और घेर दिखाया जो कच्ची ईंटों के बने हुए थे। चौधरी साहब ने नाई से पूछा कि ये हैं चौ० पीरुसिंह के घर और घेर, इनमें कोई पक्की ईंट भी कहीं नजर आयी। नाई बड़ा शर्मिन्दा हुआ और क्षमा मांग कर चला गया।

एक बार जमना में बाढ़ आ गई। बाढ़ ग्रस्त गांवों वाले मटिण्डू गांव में भूसा और अनाज लेने गये। चौ० साहब ने भूसे और अनाज की उनकी गाड़ी भर दी। बाद में वे लोग उनके पैसे देने लगे। चौ० साहब ने कड़क कर कहा कि पैसे देने के लिए चौ० पीरुसिंह का ही घर मिला था और कोई घर गांव में नहीं है। ऐसे त्यागी और उदार दानी चौधरी साहब थे।

सेवा कार्य

चौधरी साहब का सारा जीवन लोगों की सेवा में बीता। उस समय जिले भर में जमीनों का बन्दोबस्त हो रहा था। मिस्टर जोजफ ने जमींदारों को लगान बढ़ाने के लिए इकट्ठा किया। किन्तु चौ० साहब ने इसका डटकर विरोध किया।

गो भक्ति

चौधरी साहब आरम्भ से ही गोभक्त थे। इन्होंने जिला करनाल के ग्राम सम्भालखा के बूचड़खाने के विषय में 'वीरता एवं साहस' से हिन्दू पक्ष की विजय की। दिसम्बर सन् १९१७ ई० में कलकत्ता गये तो वहाँ गायों की दशा देखकर इनके हृदय पर दु:सह आघात हुआ क्योंकि गोरक्षा का विचार इनके दिल में सदा बना रहता था। इन्होंने ग्राम 'खाण्डा' में पञ्चायत करा कर मुसलमानों के हाथ गौ बेचना एकदम मना करा दिया। अन्तिम समय गोरक्षा के विषय में उनकी उत्कृष्ट इच्छा थी कि एक बड़ी पंचायत की जाए। परन्तु अचानक मृत्यु के कारण इनकी यह इच्छा पूर्ण नहीं हो सकी।

शुद्धि कार्य

सम्वत् १९७४ में एक जाट का लड़का जो ईसाई हो गया था, उसको शुद्ध करके अपने घर में रखा। ग्राम 'रायपुर' सोनीपत में सर्वप्रथम शुद्धि का काम इन्होंने किया था। आर्यसमाज के उत्सवों और नगर कीर्तनों में जो रुकावट सरकार तथा पौराणिक विचारवाली जनता की थी उसको दूर करने के लिए वह सदा अग्रसर रहे। ❑❑

[स्रोत : गुरुकुल मटिंडू शताब्दी विशेषांक]

ब्रह्मचर्य

ऋषि दयानन्द ब्रह्मचर्य की मर्यादा का कितना ध्यान रखते थे, उसका कुछ अनुमान इस घटना से किया जा सकता है कि एक दिन जब वे मथुरा में यमुनातट के विश्रांत घाट पर समाधिस्थ थे, उस समय एक देवी ने श्रद्धा से अपना सिर उनके पाँव पर रख दिया तब उन्होंने प्रायश्चित रूप में ३ दिन का उपवास रखा था।

धर्म और अधर्म

व्याख्याता—शास्त्रार्थ महारथी पं० रामचन्द्र जी देहलवी

धर्म—जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपात-रहित न्याय सर्वहित करना है, जो कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिए यही एक मानने योग्य है, उसको धर्म कहते हैं ।

आइये, हम धर्म और अधर्म के स्वरूप पर विचार करें और सदैव धर्माचरण करने का निश्चय करें ।

श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज ने धर्म का लक्षण करते हुए सबसे पूर्व ईश्वर की आज्ञा का यथावत पालन करना आवश्यक समझा, जिससे ईश्वर का मानना स्वत: सिद्ध है । उस ईश्वर को न मानने वाला इस लक्षण के अनुकूल धर्मात्मा नहीं समझा ज सकता ।

बहुधा ऐसे मनुष्य दुनिया में मिलेंगे, जिनका ईश्वर में विश्वास नहीं, परन्तु वे भी सृष्टि नियमों को मानते हैं और उन पर चलते हैं । ऐसे पुरुष पूर्ण धर्मात्मा नहीं कहे जा सकते चूंकि उन्होंने नियामक के आवश्यक अंग को नहीं माना जिसके बिना किसी भी नियम का निर्माण होना असम्भव है ।

अनुमान-प्रमाण विशेषकर मनुष्य के लिए ही है, जो कारण से कार्य और कार्य से कारण का अनुमान करके अपने कार्यों की सिद्धि करता है। प्रत्येक समय यह आवश्यक नहीं कि कार्य और कारण दोनों की प्रतीति एक ही साथ हो । यदि दुनिया में कहीं ऐसा नियम होता कि दोनों एक ही साथ होते तो अनुमान प्रमाण की आवश्यकता ही न होती ।

जैसे बादलों को देखकर होने वाली वर्षा का और हुई वर्षा को देखकर उसके कारण रूप बादलों का अनुमान होता है, इसी प्रकार दु:ख को देखकर पाप-कर्मों का, और पापकर्मों को देखकर दु:खों का अनुमान होता है । यदि कोई दु:खों को देखकर पाप-कर्मों का अनुमान करे या सन्तान को देखकर मात-पिता का, तो उसको पूर्ण ज्ञानी नहीं कह सकते । इसी प्रकार यदि कोई सृष्टि नियमों को देखकर और स्वीकार करके भी उनके नियामक को स्वीकार न करे, तो वह भी पूर्ण ज्ञानी न समझा जाएगा । और जो पूर्ण ज्ञानी ही नहीं, वह पूर्ण धर्मात्मा ही कैसे हो सकता है? चूंकि धर्मात्मा के लिए ज्ञानपूर्वक कर्मों की ही तो प्रधानता है ।

यदि कोई यह शंका करे कि ईश्वर ने कानून तो बना दिया, पर वह अब कुछ नहीं करता और न आगे करने की आवश्यकता है । प्रत्येक कार्य उस ही नियम के अनुसार होता चला आ रहा है। और आगे भी होता रहेगा, तो क्या हानि? इसका उत्तर यह है कि कानून स्वयं कुछ नहीं कर सकता जब तक कि चेतनकर्ता उसको अमल में न लाते, जैसे कि ताजीरात हिन्द किसी अपराधी का कुछ नहीं कर सकती, जब तक कि पुलिस उसको पकड़ कर जज के सामने पेश न करे और जज उसको अपराध के अनुसार दण्ड न दे दे । इसी प्रकार परमात्मा का कानून भी ईश्वर के स्वयं अमल में लाए बिना कुछ नहीं कर सकता ।

जो ईश्वर को कानून का बनाने वाला तो मानता है लेकिन चलाने वाला नहीं मानते, उनको यह विचारना चाहिए कि जिस बुद्धि ने कानून का

निर्माण किया है, वही बुद्धि उसको चला सकती है। प्रकृति जड़ होने से स्वयं न कोई कानून (नियम) बना सकती है और न किसी के बनाये नियम पर स्वयं स्वतन्त्रता से चल सकती है। जीवात्मा भी अल्पज्ञ होने से बिना ईश्वर से शरीर तथा ज्ञान प्राप्त किए न कोई नियम बना सकता है, न चल तथा चला सकता है। जीवात्मा इस प्राकर की ईश्वरीय सहायता प्राप्त करके भी, जो नियम बनाता या चलाता है, उसको भी वह अन्य पुरुषों की सहायता से ही कार्यरूप में परिणत करता है। कई स्थानों पर स्वयं अल्पज्ञ और अल्पशक्ति होने के कारण, अपनी इच्छा के विरुद्ध फल की प्राप्ति और असफलता का पात्र बनता है। जैसे आपने देखा होगा कि कभी-कभी बिना किसी इच्छा के स्वयं ठोकर लग जाती है तथा भोजन करते समय दांतों के तले जीभ कटकर कष्ट देती है। जिससे कि यह सिद्ध है कि कभी-कभी जीवात्मा अपने शरीर पर भी पूर्ण अधिकार नहीं रख पाता। पर परमात्मा सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान होने के कारण इकला ही सब नियमों को बनाता और स्वयं उन्हें चलाता है, यह हममें और परमात्मा में भेद है।

अब प्रश्न उठता है कि ईश्वर की आज्ञा कौन सी मानी जाये ? मुसलमान भाई कहते हैं कि कुरान ईश्वर का हुक्म है। ईसाई भाई बाईबिल को खुदा की पुस्तक बतलाते हैं, इस ही तरह अन्य मजहब भी। परन्तु इन सबको पुस्तकों में परस्पर भेद और विरोध होन के कारण सबको ईश्वर की आज्ञा नहीं कहा जा सकता।

ईश्वर आज्ञा वही हो सकती है जो ईश्वर की भांति सार्वभौम हो, एकदेशी न हो। अर्थात् सब मनुष्यों के लिए हितकर हो, किसी विशेष देश या जाति का पक्षपात न हो तथा उसके दया, न्यायादि गुणों के विरुद्ध न हो, अर्थात् वेदानुकूल हो।

● **पक्षपात रहित न्याय**—यह बहुत कम देखा जाता है कि मनुष्य न्याय करे और वह पक्षपात रहित हो। मनुष्य अल्पज्ञ और अल्प शक्तिमान होने के कारण कई दोषों से युक्त होता है। धन का लालच, रिश्तेदारी, मित्रता, दूसरे का भय और मोह आदि उसको पूर्ण न्याय नहीं करने देते। ईश्वर इन त्रुटियों से रहित होने के कारण पक्षपात रहित न्याय करता है। अतः जो पुरुष ईश्वरीय गुणों के अनुकूल अपने गुण बनाकर संसार में कार्य करता है और अपने जीवन को व्यतीत करता है वह एक समय पूर्वोक्त सम्पूर्ण दोषों से मुक्त होकर पक्षपात रहित न्याय करने लग जाता है। पक्षपाती पुरुष अपना दायरा अत्यन्त संकुचित रखता है। यह केवल अपने में या जिसके साथ वह पक्षपात करता है, उस ही तक सीमित रहता है। परन्तु पक्षपात रहित कर्म करने वाला यजुर्वेद के—

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न वि चिकित्सति॥

(यजु० ४० मन्त्र ९)

अनुसार अपने को सब प्राणियों में और सब प्राणियों को अपने में समझता है। एक देशी जीवात्मा के लिए यह असम्भव है कि वह ईश्वर की तरह सब वस्तुओं में व्याप्त हो जाए। उसके लिए एक यह ही प्रकार वह अपने को "सर्वप्रिय" "सर्वहितकारी" बना सके, यह भी इसकी सर्वव्यापकता है।

● **सर्वहित**—जिस न्याय में किसी का अहित न हो, वह पक्षपात रहित न्याय है। इसका दूसरा नाम सर्वहित है। ईश्वर इतना गम्भीर है कि दिन-रात सबका न्याय करता हुआ भी प्रत्येक जीव के हित को लक्ष्य से रख एक जीव के बुरे कर्मों को दूसरे पर प्रकट नहीं करता, चूंकि वह जानता है कि बुराई के छुड़ाने में ऐसी बात साधक नहीं होती, अपितु बाधक होती है। जो

जीव धर्म का आचरण करना चाहे, उसको **"सर्वहितकारी"** अवश्य होना चाहिए। प्राय: देखा जाता है कि मनुष्य एक दूसरे की निन्दा करने के लिए घर-घर मारे-मारे फिरते हैं और उनको तब तक चैन नहीं पड़ता, जब तक दस-बीस स्थानों पर किसी की निन्दा न कर आवे। परन्तु वे यह नहीं विचारते कि ऐसा करने से किसी का भी कोई हित नहीं होता, बल्कि अपनी ही आदत खराब होती है, और परस्पर रागद्वेष की वृद्धि होकर वैमनस्य बढ़ता है।

स्वार्थी पुरुष भी पूर्ण न्याय या सर्वहित नहीं कर सकता। वह अन्यों के लाभ की अपेक्षा स्वार्थ को अधिक मूल्यवान् समझता है और दूसरे के बड़े-बड़े लाभ को अपने तुच्छ से तुच्छ लाभ पर कुर्बान कर देता है। बहुत से मतों के प्रवर्तकों ने अपने मान और प्रतिष्ठा के लिए अपनी न्यूनताओं (कमजोरियों) को भी अपने अनुयायियों का एक धार्मिक नियम बना दिया और कोम की आगे होने वाली उन्नति में एक जबर्दस्त रोड़ा अटकाया जिसके फलस्वरूप आज कुछ लोग **"शारदा एक्ट"** जैसे आवश्यक और अत्युपयोगी कानून को भी अपने मजहब के विरुद्ध मानकर उसका विरोध करते और कहते हैं कि हमारे पूर्वज इस प्रकार की कम उम्र वाली कन्याओं से शादी कर गये हैं, अत: यह कानून उनके विरुद्ध होगा, इसलिए हम नहीं मान सकते। इसके विरुद्ध ऋषि लोग ईश्वरभाव से प्रेरित हो तथा सर्वहित को लक्ष्य में रखकर जो कुछ कार्य कर गये, वह उन सम्पूर्ण दोषों से रहित था, जिनसे सामान्य पुरुष प्राय: शीघ्र मुक्त नहीं हो पाते।

● **प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित**–प्रत्यक्षादि प्रमाण जो आगे आयेंगे, उनकी व्याख्या वहाँ की जावेगी। यहाँ केवल यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी चीज के लिए परीक्षा द्वार बन्द नहीं। किसी भी काम को खूब सोच समझ और परीक्षा करके करना चाहिए। यदि हम उन परीक्षाओं में ठीक और यथार्थ उतरे तो धर्म और यदि न उतरे तो उसे अधर्म (अकर्तव्य) समझना चाहिए। इसलिए कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्म का स्वयं उत्तरदाता हो, स्वयं परीक्षा करके ही प्रत्येक कार्य को करने की आज्ञा दी गई है। चाहे रेलवे का प्रबन्ध इञ्जीनियरिंग के अधीन रखा गया है और अदमी दिन रात लाइन और पुलों की देखभाल करते रहते हैं, पर फिर भी ड्राइवर को सर्च लाइट और अपनी आँखों से देखकर चलाने की आज्ञा दी जाती है ताकि उसका वैयक्तिक उत्तरदायित्व उसके कार्य के साथ रहे।

● **वेदोक्त**–वेद जो कि **"विद्सत्तायाम, विद ज्ञाने, विद विचारणे"** तथा **"विदलाभे"** इन धातुओं से सिद्ध होता है जिनका अर्थ हुआ कि जो सत्ता ज्ञान विचार और लाभ के सहित हो अर्थात् सर्वप्रथम वेद द्वारा हमें प्रत्येक वस्तु की सत्ता का उपदेश होता है, तत्पश्चात् उन वस्तुओं तथा उनके गुण और व्यवहारादि का ज्ञान होता है। ज्ञान होने के अनन्तर ही हम उसके सूक्ष्म विषयों पर विचार करने में समर्थ हो पाते हैं, अन्त में इसी क्रम से हमें उस ज्ञान और विचार के अनुरूप लाभ की प्राप्ति होती है। इस प्रकार उस वेद से उपदिष्ट कर्मों को जो कि मोटे शब्दों में ज्ञानानुकूल और विचार पूर्वक हो उन्हें धर्म कहा जाता है। इसीलिए महात्मा मनु ने अपनी स्मृति में–**"वेदोऽखिलो धर्म मूलम्"** तथा **"धर्म जिज्ञासा-समानानां प्रमाणं परमं श्रुति:"** कहा अतएव प्रत्येक व्यक्ति को इस प्रकार के वेदोक्त कर्मों को करना ही अपना धर्म समझना और उसका अनुष्ठान करना चाहिए।

● **अधर्म**–जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा को छोड़कर और पक्षपात सहित अन्यायी होकर बिना परीक्षा करके अपना हित करना है जो अविद्या, हठ, अभिमान, क्रूरतादि दोषों से युक्त होने के

कारण वेद विद्या से विरुद्ध है और सब मनुष्यों को छोड़ने के योग्य है, वह अधर्म कहाता है ।

यद्यपि किसी विशेष व्याख्या की आवश्यकता नहीं चूंकि धर्म समझ लेने के बाद सिर्फ इतना विशेष याद रखना चाहिए कि जो धर्म से विपरीत अर्थात् उल्टा हो उसे अधर्म कहते हैं । ऋषि दयानन्द ने मत-मतान्तरों को इसी कसौटी पर कस उन्हें मत-मतान्तरों के नाम से निर्देश किया या मजहब बतलाया । चूंकि उन सम्पूर्ण मजहबों में जो कि अपने को धर्म के नाम से पुकारते थे, उपर्युक्त दोष थे, जैसे कोई ईश्वर की सत्ता को ही न मानते थे, अर्थात् नास्तिक थे । जब वे ईश्वर ही को न मानते थे तो फिर ईश्वर की आज्ञा को ही कैसे मानते । लिहाजा ऋषि ने उन्हें भी कहा कि तुम्हारा मत धर्म नहीं कहा जा सकता कि वह धर्म के एक आवश्यक अंग से रहित है, अत: वह मजहब है । इसी प्रकार जो लोग ईश्वर की सत्ता को मानते थे पर उसकी आज्ञाओं में पक्षपात मानकर किसी एक देश या जाति के लोगों से पक्षपात या प्रेम और दूसरों से नफरत प्रकट करते थे, या ईश्वर के नाम पर यज्ञों में अथवा देवी-देवताओं के सामने पशु हत्या आदि करके अपनी क्रूरता और मूर्ति पूजा आदि करके जड़ में चेतना को मानकर अपनी अविद्याप्रियता का परिचय देते थे, उन्हें तथा जिनके ग्रन्थों में निरी असम्भव और विश्वास न करने लायक बातें भरी पाई, ऋषि ने कहा कि तुम्हारा मत भी सिर्फ मत यानी मजहब है । वह धर्म का स्थान नहीं ले सकता । इसीलिए वह सम्पूर्ण मनुष्य के लिए मान्य न होकर सिर्फ तुम लोगों ही की स्वार्थ पूर्ति के लिए हो सकता है । अत: प्रत्येक समझदार मनुष्य को इस प्रकार मजहबों या मत-मतान्तरों को दूर से ही प्रणाम करके छोड़ देना चाहिए जिससे कि उसका जीवन व्यर्थ बर्बाद न हो । (प्रस्तुति : अवत्सार) ❑❑

बड़ों से छोटी भूल (पृष्ठ २० का शेष)

आर्थिक आधार पर आरक्षण होने के लाभ को एक सरल दृष्टान्त से स्पष्ट किया जा सकता है- जैसे कोई व्यक्ति भिखारी है, उसको यदि सहायता के रूप में करोड़ों रुपये मिल जाते हैं तो वह भिखारी नहीं, करोड़पति हो जाता है। जाति के आधार पर आरक्षण देने से वह कितना ही अर्थसम्पन्न हो जाए, किन्तु वह रहेगा निम्न वर्ग का ही। यह तो ऐसे हुआ जैसे वैदिक युग में विद्वान्, चिकित्सक, अधिवक्ता, अभियन्ता का योग्य पुत्र ही उसका उत्तराधिकारी होता था, किन्तु आरक्षणवादियों ने योग्यता की उपेक्षा कर अयोग्य पुत्रों को ही चिकित्सक आदि बना दिया। यह कितना हास्यास्पद तथा दु:खद है कि वैद्यक के विषय में क, ख, ग भी न जानने वाला व्यक्ति चिकित्सक बन बैठे। मनु ने ऐसे लोगों को **"शूद्रवत् बहिष्कार्य:"** कहा है। अर्थात्- ऐसे अयोग्य व्यक्ति का अयोग्यवत् ही बहिष्कार होना चाहिए, तब समाज में सुव्यवस्था बनी रहेगी। ब्राह्मण, वैद्य आदि के पुत्र अपनी योग्यता बढाएँगे और उनके पिता, पितामह आदि भी उन्हें योग्य बनाने में सचेष्ट रहेंगे। यदि इस आरक्षण नीति को नहीं बदला गया तो शासन-प्रशासन-व्यवस्थापन आदि सभी स्थानों पर अयोग्य लोगों का जमघट हो जाएगा, जो परिवार, समाज तथा राष्ट्र के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध होगा

उपर्युक्त दो भूलें उन महनीय व्यक्तियों से हुई, जिनकी राष्ट्रीयता एवं विद्वत्ता असन्दिग्ध थी। आज भी यदि स्वार्थी लोग अपने क्षुद्र स्वार्थों का परित्याग करें तो राष्ट्रहित तथा समाजहित में इन दोनों भूलों का परिमार्जन किया जा सकता है और यह होना ही चाहिए, क्योंकि इसी से मानवता सुरक्षित रहेगी। ❑❑

परिवार छोटे हुए या कार्पोरेट ने लोगों को अकेला किया (पृष्ठ ६ का शेष)

अन्दर जिम्मेदारी का भाव कम होता चला जा रहा है। आज अकेलेपन में छोटी सी डांट भी बच्चों को चुभने लगती है और वो आत्महत्या तक कर रहे हैं । पहले परिवार में कोई न कोई बड़ा जरूर होता था, जैसे चाचा चाची ताऊ ताई उनके बच्चे आदि, जिनके साथ वो अपने दिल की हर बात बेझिझक कह सकते थे, जो बात हम माता-पिता से भी कहने में डरते थे लेकिन आज सूने से घर में ऐसा कोई नहीं है जिसके पास बच्चों को समझने या सुनने की फुर्सत हो जिससे वो अकेलापन महसूस करता है, अगर रिश्तों के नाम पर उनके पास कोई है तो टेडी बियर और बार्बी डोल्स जो उन्हें ना सुन सकते ना समझ सकते ना समझा सकते।

यानि कई दशकों पहले देखा गया कुछ उद्योगपतियों का सपना अब सच हो रहा है। लोग आत्मनिर्भर बन रहे हैं लेकिन परिवार पीछे छूट रहे हैं। एकल होकर वो इन कारपोरेट कम्पनियों के लिए कमा रहे हैं चाहें खेलने के लिए गुड़ियाँ हो या खाने के लिए ऑनलाइन आर्डर घूमने के लिए नाना नानी बुआ मौसी की जगह पर्यटन्न रिसोर्ट। हर एक जगह जहाँ वो खर्च कर रहे है सिर्फ कार्पोरेट के लिए।

हम जनसँख्या बढ़ाने की वकालत नहीं कर रहे हैं सिर्फ बता रहे हैं कि परिवार छोटे हुए तो फायदा किसका हुआ संपत्ति किसकी बढ़ रही है, दो बच्चों से अब लोग सिर्फ एक ही बच्चे पर आ गये, आगे चलकर क्या होगा आप खुद अनुमान लगा सकते हैं। यानि समाज भी होगा लोग भी होंगे लेकिन सब अकेले और वो अकेले लोग सिर्फ कारपोरेट के लिए कमा रहे होंगे। सोचिये छोटे परिवार सुखी हैं या बड़े परिवार। ❑❑

कितना खतरनाक है ये १२ सेकंड का जहर (पृष्ठ १२ का शेष)

प्रयास किया। सिर्फ यही नहीं थोड़े दिन पहले दिल्ली महिला आयोग ने पुलिस को नोटिस जारी कर रील्स बनाने वाली एक महिला के खिलाफ एफ० आई० आर० करने की मांग की है। इस महिला पर आरोप है कि वह अपने १०-१२ साल के बेटे के साथ अश्लील और उत्तेजक भाव-भंगिमाओं के साथ नाचने वाले वीडियो बनाती थी।

यानि अब लोग लोकप्रियता हासिल करने के लिए बेशर्मी की सभी हदें पार कर रहे हैं। वीडियो पर महज व्यूज हासिल करने के उद्देश्य से शॉर्ट वीडियो के जरिए अश्लील और बेहद ही घटिया कॉन्टेंट भी परोसा जा रहा है। कई लोग तो व्यूज बढ़ाने के लिए अपने छोटे-छोटे बच्चों को भी रील्स पर एक्सपोज कर देते हैं। रील्स में हमने कितनी ही बार देखा है कि माताएं अपने नाबालिग बेटों और बेटियों से वीडियो बनवाती हैं । कई लोगों ने तो उसे पैसे कमाने का माध्यम ही बना लिया है । अब आप सोचिए कि जो नाबालिग लड़की रील्स के लिए नाच रही है, वो कैसे समझ पाएगी कि उसका जीवन किस ओर जा रहा है और असल में उसे किस और जाना चाहिए? उन्हें सोचना होगा कि आज संसार में शिक्षा, समाज, विज्ञान, लेकर जिन महान लोगों का हम नाम लेते हैं क्या वो रील्स बनाकर महान बने थे? और सोचिये क्या यह १२ सेकंड का जहर कहीं आपको तुलना, गुस्सा या अवसाद की तरफ तो नहीं ले जा रहा है? ❑❑

जो धर्म को जानने की इच्छा करें, उनके लिये वेद ही परम प्रमाण है।

आर. एन. आई. नं० १६३३०/६७
Post in Delhi R.M.S.
०५-११/०१/२०२४
भार ४० ग्राम

जनवरी २०२४

रजिस्टर्ड नं० DL (DG-11)/8029/2024-26

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएँ, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

–दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०–९६५०५२२७७८

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष एवं तार्किक समीक्षा के लिए
उत्तम कागज, मनमोहक जिल्द एवं सुन्दर आकर्षण मुद्रण
(द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23x36%16	मुद्रित मूल्य ₹60	प्रचारार्थ ₹40
विशेष संस्करण (सजिल्द) 23x36%16	₹100	₹60
पॉकेट संस्करण	₹80	₹50
विशिष्ट पॉकेट संस्करण	₹150	₹100
स्थूलाक्षर (सजिल्द) 20x30%8	₹200	₹120
उपहार संस्करण	₹1100	₹750
सत्यार्थ प्रकाश अंग्रेजी अजिल्द	रु. २५०/-	रु. १६०/-
सत्यार्थ प्रकाश अंग्रेजी सजिल्द	रु. ३००/-	रु. २००/-

प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं

कृपया एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द जी की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें..

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, नया बांस, दिल्ली-6
Ph : 011-43781191, 09650522778
E-Mail : aapt.india@gmail.com

छपी पुस्तक/पत्रिका

श्री सेवा में..........
ग्राम..........
डा०..........
जिला..........

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली. नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।